व्यापार-शिक्षा ।

लेखक-

पण्डित गिरिधर शर्मा ।

प्रकाशक-

हिन्दी-ग्रन्थरत्नाकर कार्यालय-

हीराबाग, गिरगाँव-बम्बई ।

वैशाख, संवत् १९७३.

प्रथम संस्करण ।]   अप्रैल, सन् १९१६.   [मूल्य आठ आने ।

प्रकाशक—
नाथूराम प्रेमी–
हिन्दी-ग्रन्थरत्नाकर कार्यालय,
गिरगाँव–**बम्बई** ।

मुद्रक—
चिन्तामण सखाराम देवळे–
बंबई–वैभव–प्रेस, सँढहर्स्ट रोड
गिरगाव–**बम्बई** ।

शुभेच्छा ।

जो भारतके व्यापारको खूब बढ़ाना चाहते है, जिनका धन इस कामकी उन्नति करनेमें लगता है, और जो तन-मन-धनसे इस कामकी उन्नतिमें दिन-रात लगे हुए है ऐसे सज्जन वैश्यबन्धुओंके कर-कमलोंमें यह छोटीसी पुस्तक प्रेमपूर्वक और शुभाकाङ्क्षापूर्वक रख-कर लेखक आशा करता है कि वे इसका सदुपयोग करेंगे और अपने बालकोंको सिखलावेंगे ।

शुभेच्छु,

गिरिधर शर्मा ।

अनुक्रमणिका ।

हिंदी-ग्रंथरत्नाकर सीरीज ।

हमारी सीरीजके स्थायी ग्राहकोको प्रारम्भमें केवल ॥) ' प्रवेश फी ' भेजना होता है । उनको सीरीजकी सब पुस्तके पौनी कीमतमे दी जाती हैं । अब तक निम्नलिखित ग्रंथ इस सीरीजमें निकलचुके हैं जिनकी हिंदी संसारमें बड़ी भारी इज्जत हुई है ।

१-२. स्वाधीनता—सुप्रसिद्ध विद्वान् जान स्टुअर्ट मिलकी लिबर्टीका अनुवाद । अनुवादक सरस्वती-सम्पादक पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी मूल्य २)

३. प्रतिभा—मानव चरित्रको उदार और उन्नत बनानेवाला उपन्यास मूल्य १) कपड़ेकी जिल्दका १|)

४. फूलोंका गुच्छा—ऐतिहासिक भावपूर्ण शिक्षाप्रद गल्पोंका सग्रह । मूल्य ॥=) कपड़ेकी जिल्दका ॥|)

५. ऑखकी किरकिरी—कविसम्राट् डा० रवीन्द्रनाथ ठाकुरके प्रसिद्ध उपन्यासका अनुवाद ' मूल्य १॥) कपड़ेकी जिल्दका १॥|)

चौबेका चिट्ठा—प्रसिद्ध बंगलालेखक बाबू बंकिमचन्द्र चट्टोपा- ' कमलाकांतेर दफ्तर ' का अनुवाद । मूल्य ॥=)

मितव्ययिता—डा० समुएल स्माइल्सकी अंग्रेजी पुस्तक थ्रिफ्ट (Thritt) का अनुवाद । मूल्य ॥=)

८. स्वदेश--डाक्टर रवीन्द्रनाथ ठाकुरकी एक निबंधमालाका अनुवाद । मूल्य ॥=)

९. चरित्रगठन मनोबल—प्रसिद्ध अमेरिकन विद्वान् राल्फ वाल्डो ट्राइन की ' कैरक्टर बिल्डिंग थाट पावर ' नामक पुस्तक का अनुवाद । . .. .. मूल्य =)॥

१०. आत्मोद्धार--डा० बुकर टी. वाशिंगटनका आत्मचरित । ... ... मूल्य १)

११. शांतिकुटीर—शिक्षाप्रद गार्हस्थ उपन्यास । ... मूल्य ॥|)

१२. सफलता और उसकी साधनाके उपाय-- ... मूल्य ॥=) कपडे जिल्दका ॥|)

१३. अन्नपूर्णाका मन्दिर—बहुत ही करुणरसोत्पादक उपन्यास ... . मूल्य ॥≈)

१४ स्वावलम्बन—डाक्टर स्माइल्सकी प्रसिद्ध अंग्रेजी पुस्तक सेल्फ हेल्प (Self Help) का अनुवाद । मूल्य १।) कपड़ेकी जिल्दका १॥)

१५. उपवासचिकित्सा—उपवाससे तमाम रोगोंको सहज ही आराम करनेके विषयमें इस पुस्तकमें विचार किया गया है । बड़े महत्वकी पुस्तक है । पाँच सुन्दर चित्र भी दिये गये हैं । मूल्य एक रुपया दो आने । सादी जिल्द ॥≈)

१६. सूमके घर धूम--एक सभ्य हास्य-पूर्ण प्रहसन । मूल्य तीन आने ।

हमारी अन्य पुस्तकें ।

१. विद्यार्थी जीवनका उद्देश्य--एक उत्तम निबंध । मूल्य -)

२. पिताके उपदेश—विद्यार्थियोंके पढ़ने योग्य । मू० डेड़ आना

३. अच्छी आदतें डालनेकी शिक्षा—मूल्य ढाई आने ।

४. युवाओंको उपदेश--विलियम काबेट सा० के एक अंग्रेजी ग्रन्थका अनुवाद । मूल्य दश आना ।

५. बूढ़ेका ब्याह--खड़ी बोलीका सुन्दर काव्य । मूल्य छह आने ।

६. शांति वैभव--विलियम जार्ज गार्डनकी ' मैजेस्टी आफ कामनेस ' का अनुवाद । मूल्य चार आना ।

७. लन्दनके पत्र—जोशीले और देशभक्तिपूर्ण पत्र । मूल्य तीन आने ।

८. कठिनाईमें विद्याभ्यास--विद्यार्थी अवश्य पढ़ें । मूल्य ।।)

९. ब्याही बहू--ब्याह शादियोंमें बाँटने योग्य । मूल्य तीन आने ।

प्रस्तावना।

सब प्रकारके साहित्यका अभ्युदय होना देशका अभ्युदय होना है। लौकिक उन्नतिके लिए व्यावहारिक शास्त्रोंकी अवश्य उन्नति होना चाहिए। किसी समय हमारा भारतीय संस्कृत साहित्य चारों प्रकारके पुरुषार्थ–सम्बन्धी ग्रन्थोंसे भरा पूरा था और उसीका फल था कि हम भूमण्डलके सम्राट थे। आज यह स्थिति नहीं है। आर्थिक ग्रन्थोंका कोई ठिकाना नहीं है। हमें सबसे बड़ी आवश्यकता अपने व्यावहारिक साहित्यके उत्पन्न करनेकी है। जब हम इंग्लैंड, जापान, फ्रान्स, जर्मनी आदि देशोंके साहित्यकी ओर देखते हैं तो सहसा जान पड़ता है कि इसी साहित्यका प्रभाव है जो इन देशोंके रहनेवाले इतने फले-फूले हैं। और जब कभी इनकी पाशविक वृत्तिका स्मरण हो आता है तब यह विचार हो आता है कि इनके यहाँ यथार्थ धार्मिक साहित्य नहीं है। सत्यके नाते कहना चाहिए कि भारतीय धार्मिक साहित्यका हमें अभिमान है और वह उचित भी है। इसी तरह हमारा आर्थिक साहित्य उपलब्ध होता तो उसका भी अवश्य अभिमान होता। उसकी हमें खोज करते रहना चाहिए और नवीन दृष्टिसे अच्छी

तरह अवलोकन करके अपना व्यावहारिक साहित्य बहुत शीघ्र तैयार करना चाहिए। क्या अर्थनीति, क्या समाजनीति, क्या राजनीति, क्या व्यापारनीति, हमें सब प्रकारकी रीति नीति व्यवस्था आदिके सहज और उत्तम ग्रन्थ तैयार करने चाहिए। यदि इन ग्रन्थोंके प्रतापसे हमें अपने लौकिक कर्तव्यों और स्वत्वोंका बोध हो जाय और हम अपने स्वत्वोंको भोगते हुए कर्तव्यपालन करने लगजायँ तो संसारमें हम भी प्रतिष्ठा पावें और सजीव जाति कहलावें। इन्हीं विचारोंसे प्रेरित होकर मैंने अपने भारतीय भाइयोंके सन्मुख यह व्यापार-सम्बन्धी छोटीसी पुस्तक उपस्थित की है। जब मैंने पिटमेनकी 'व्यापारी प्राइमर' और नेठसनकी 'बीज़िनेस' नामक पुस्तकको देखा, तब मुझे हिन्दीमें भी ऐसी पुस्तक लिखनेकी इच्छा हुई। भारतीय भाषाओं-की ओर देखा तो बंगलामें 'बीजिनेस' व्यवसाय ओ वाणिज्य' 'शिल्प ओ वाणिज्य' आदि अच्छे-अच्छे मासिक निकलते हुए जान पड़े। गुजरातीमें भी 'देशी चेम्बर्सनु मासिक' पत्र मिला। मराठीमें व्यापार-दर्पण नामकी पुस्तक पाई। गुजरातीमें एक 'व्यापार-शिक्षक' नामकी पुस्तक भी देखी। इतनेमें ही जीवनलाल अमरशी महताकी पुस्तक 'व्यापारोपयोगी पाठमाला' मेरे देखनेमें आई। यह पुस्तक किसी मराठी पुस्तकके आधारसे लिखी गई है। मैंने इन पुस्तकों और मासिक-पत्रोंका आलोडन किया। फिर मैं कई एक भारतीय सेठ साहूकारोंकी दूकानोंपर बैठा और उनकी प्रवृत्ति देखी। इसके बाद मैंने उक्त जी. आर. महताके ग्रन्थके आधार पर स्वतन्त्र रीतिसे इस पुस्तकको लिखा। इसमें मैंने वर्तमान समयके अनुसार इस बातका पक्ष किया है कि भारतके लिए रक्षणनीति उपयोगी है। जब उद्योग खिल उठें तब यह नीति हटा देनी चाहिए। स्वर्गीय लार्ड मिन्टोका भी यही विश्वास था। एक बार उनके विषयमें टाइम्स आफ इंडियामें छपा था:—

"Even whilst he was in India, Lord Minto made no secret of his belief that free trade is not suited to the economic needs of this country, and, in an interview with an American Journalist, frankly avowed his belief in protection It is a truism that in every country in the world industrial development has occurred only under protection Great Britain is no exception to the rule The British industrial system took rest under a rigorous system of protection, and it was only when protection had done its work, that the tariff had to be discarded We have never yet come across any good reason why India except in a few specially favoured industries like those associated with cotton and jute, should be an exception to the rule. This is an issue that before long will have to be squarely faced and threshed out"

इन वाक्योंको पढ़नेवालेके जीमें यह बात उठ सकती है कि भारतके हितके लिए भारतका शासन किये जानेकी बात माननेवाले और ऐसे विचार रखनेवाले लार्ड मिन्टो क्यो न यहाँपर रक्षितनीति चलानेका कानून बना सके ? इसका उत्तर अनेक पर्दोंमे छुपा हुआ पड़ा है जो समय पर स्वय प्रकट होगा और बहुत सम्भव है कि वर्तमान यूरोपके महा संग्रामके अन्त हुए बाद साम्राज्य-संगठनके समय ये गाँठें खुलें । इस पुस्तकमे साधारणतया व्यापारियोंको जिन जिन बातोंकी आवश्यकता है, उन उन बातोंपर छोटे छोटे पाठ दिये है । पुस्तकको जहाँतक होसका सरल किया है । इसमें प्रसंगवश अपने बंधुओंको चुटिकियाँ लेकर सताया—नहीं, जगाया भी है । हमने अपने राजा महाराजाओंको भी ताना देनेमें कमी नहीं की और यह हमने इसी लिए किया है कि हमारी लेखिनीकी चोट

खाकर ही ये सरस्वतीकी सेवा पूजा करें और साहित्यभंडारको भरपूर कर देनेके लिए अपनी शक्तिभर कोशिश करें।

अन्तमें हम उन सब ज्ञात और अज्ञात महाशयोंको धन्यवाद देते हैं कि जिनके लिखे हुए ग्रन्थों-लेखों आदिसे मुझे इस विषयमें ज्ञान हुआ और विशेष धन्यवाद व्यापारोपयोगी पाठमालाके लेखक श्रीयुत जीवनलाल अमरसी महताको है जिनकी पुस्तकसे हमें पूरी पूरी सहायता मिली है।

नवरत्न-सरस्वती भवन
झालरापाटन राजपूताना
वैशाख कृष्ण १० सं० १९८२

गिरिधर शर्मा।

व्यापार-शिक्षा ।

व्यापारका महत्त्व ।

खरीदनेके और बेचनेके धंदेको व्यापार कहते हैं । सस्ताई हो तब खरीदना और मँहगाई हो तब बेचना, व्यापारीका मुख्य काम है। व्यापार शब्दका अर्थ बहुत ही सरल और अत्यन्त तुच्छ जान पड़ता है, परन्तु वह बड़ा ही व्यापक अत्यन्त गहन और महत्त्वसे परिपूर्ण है । राजकीय विषयोंमें जैसे सार्वभौम-सत्ताका महत्त्व है, वैसे ही काम-धन्दोंमें व्यापारका महत्त्व है । सार्व-भौम-सत्ताकी भाँति व्यापार भी सर्वव्यापक है । सार्व-भौम-सत्ताके चलानेमे जैसे राजकार्यकी निपुणता, गणनकौशल (हिसाबी चतुराई), लोक व्यवहारज्ञता, तीक्ष्णबुद्धि, दूरदर्शिता आदि गुणोंकी आवश्यकता है, वैसे ही व्यापारमें भी है । व्यापारमें इनका पद पद पर काम पड़ता है । ये सारे गुण एक व्यक्तिमें न हों तो भी राज-कार्य चल सकता है । अर्थात् न्यारे न्यारे कामोंके लिए उस उस कामके जाननेवाले मुख्य मुख्य पुरुष रखकर राज-कार्य चलाया जा सकता है परन्तु व्यापारमें यह बात नहीं है । व्यापारीमें इन सब गुणोंका संग्रह होना ही चाहिए । कितनी ही बातोंमें सार्व-भौम-सत्तासे भी व्यापारकी व्यापकता विशेष माननी ही पड़ती है । व्यापारीको लोगोंकी रुचि कैसी है, देशमें कैसे मालकी ज्यादा खपती होती है, देश-विदेशका किस

प्रकारका माल किस जगह पर खप जायगा, इत्यादि समस्त बातोंकी पूरी पूरी जानकारी (वाकफियत) होनी चाहिए। इस जानकारीके अनुसार अपना काम ठीक नियमानुकूल चलाना व्यापारीका मुख्य कर्तव्य है। इस कर्तव्यसे न चूकना राजकार्य चलानेकी अपेक्षा कठिन काम है। व्यापारीमें इस बातको जान लेनेकी पूरी शक्ति होना चाहिए कि लोगोंको कहाँ पर किस वस्तुकी कितनी और कब जरूरत होगी। कौनसी वस्तु कहाँ पर कितनी पैदा होती है, यह जानना व्यापारीका काम है। पूरा संग्रह और काफी खपती-का नियमन कर देना व्यापारीके हाथकी बात है। संग्रह और खपती पर सत्ता रखना व्यापारीका मुख्य काम है और इस सत्ताको काममें लानेका सम्मान भी व्यापारीको ही है। इस बातको परख लेनेका काम भी व्यापारीका है कि किस-किसके पास, कहाँ-कहाँ पर कितनी कितनी सम्पत्ति है और देश कितना धनवान् है। लोगोंके पासकी सम्पत्तिका कैसे उपयोग करना, अन्ध-पङ्गु-न्यायसे उसे कैसे बढ़ाना, आदि बातोंको सोचसमझकर उनको अमलमें लानेका कठिनतर काम व्यापारीका ही है। वह ऐसा काम है कि इसमें औरोंका चंचु-प्रवेश भी नही हो सकता। जैसे मदारी बीन बजाकर सर्पको अपनी ओर खींच लेता है और उसे मनमाने तौर पर नचाता है, वैसे ही व्यापारीको ऐसी बाँसुरी बजाना याद होना चाहिए कि दुनियाँका प्राणोंसे भी प्यारा धन खजानोंसे निकल-निकल कर उसके पास आजावे और वह उसे इधर उधर नचाते हुए काममें ला सके। संसारके लोगोंके खाने-पीनेकी, ऐशो-आरामकी, अन्न-वस्त्रकी और सब प्रकारके व्यावहारिक कामोंकी चिन्ता रखनेवाला कोई है तो व्यापारी ही है।

कहनेका तात्पर्य यह है कि व्यापार संसारका बड़ेसे बड़ा व्यवहार है और राज्यके कारबारसे व्यापारका कारबार गहन है। व्यापारकी व्याप-

कता सार्वभौम-सत्ताके समान ही है । इसीसे व्यापार एक स्वतन्त्र और अत्यन्त गहन शास्त्र है । व्यापार एक उत्तमसे उत्तम कला है । व्यापार अनेक दुर्घट और गहन शास्त्रोंका एकीकरण है । व्यापारी मानवी स्वभाव और सृष्टिपरकी सत्ताको अपने हाथमें रखता है । व्यापारी मनुष्य-स्वभावको खूब पहिचानता है । व्यापारीका काम मनुष्यकी आवश्यकतायें और इच्छायें पूर्ण करनेका है । व्यापारीको-एकमात्र व्यापारीको ही इस बातका अधिकार, इस बातका मान है-व्यापारीमें ही इस बातका चातुर्य-इस बातकी सत्ता है कि, वह लोगोंकी सम्पत्तिका, लोगोंके कामका, लोगोंके आविष्कारका, लोगोंके कौशलका, यथायोग्य उपयोग करे और अर्थशास्त्रमें वर्णन किये हुए श्रमविभागकी ठीक ठीक व्यवस्था करे । सार्वभौम-सत्तासे जिस कामका होना कठिन है उसी कामको व्यापारी बातकी-बातमें कर डालता है । अतुल सत्ता, असंख्य सैन्य और बड़ी भारी शक्तिके बलसे भी जिस कामको सार्वभौम राजा नहीं कर सकता, उस कामको एक व्यापारी अपनी हिम्मत, कल्पनाशक्ति और योजनाकी सहायतासे फौरन कर डालता है ।

कोई शास्त्र, व्यापारशास्त्रके समान उपयोगी नहीं है और न कोई कला ही व्यापारकलाके समान महत्त्वकी है ।

धंदा ।

मनुष्य अपना समय, द्रव्य, लक्ष्य और श्रम जिस काममें लगाता है -उसे धंदा कहते है । मनुष्य मात्र जिस उद्योगको-जिस कामको अपने पेटके लिए करते है उसका नाम धंदा है । पेट भरनेके लिए चलाये हुए उद्योगको या टका कमानेके साधनको धंदा कहते हैं । क्रय-विक्रय करनेमें, श्रमको ठीक तौर पर विभाग कर लगानेमें, कल्पनाकी

सामग्री इकट्ठी करनेमें, कुशलताके पदार्थ संग्रह करनेमें, और श्रमका फल पानेमें और इनके द्वारा लाभ उठानेमें मनुष्यको जो उद्योग करना पड़े, जो परिश्रम उठाना पड़े, जो युक्तियाँ लड़ानी, पड़े, जो चतुराई भिड़ानी पड़े, जो धन खर्चना पड़े और जो जो करना पड़े उन सारे व्यवहारोको धंदा कहते है। प्रत्येक मनुष्यको कुछ-न-कुछ धंदा करना ही पड़ता है। प्रत्येक मनुष्य धंदार्थी है। यह बात दूसरी है कि धंदा भाँति भाँतिका होता है, परन्तु सबको किसी-न-किसी प्रकारका धंदा अवश्य करना पड़ता है। ऐसा एक भी मनुष्य नहीं, जिसे धंदा न करना पड़ता हो—सबके साथ धंदा लगा हुआ है। अतः प्रत्येक मनुष्यको धंदेका ज्ञान सम्पादन करना जरूरी है। यह शिक्षा प्रारम्भसे ही—धंदा प्रारम्भ करनेके पहलेहीसे होनी चाहिए। धंदा एक सामान्य शब्द है। उसके कई प्रकार है— १ व्यापार उद्योग, २ कल कारखाने, ३ कला कौशल, ४ खेतीबारी, ५ विद्यावृत्ति और ६ अन्यान्य फुटकर काम, इस तरह हमें धंदेके मुख्य छः भेद देख पड़ते है।

व्यापार, देशोन्नतिकी सूचना देनेवाला एक मुख्य लक्षण है। शान्तिके साम्राज्यमें सुख और विलासका फैलाना व्यापारका काम है। नवीन देशो या जंगलोंमे भी प्रवेश कर अमन चैन बरसाना व्यापारका काम है। देशको आधीन कर लेनेके बाद जब शूरवीर सिपाहियोंके अस्त्र-शस्त्र ठिकाने रखदिये जाते है और जब व्यापार खूब चलने लगता है, तब कहा जाता है कि अब सुखशान्तिका समय आया। नगरोंकी पूर्ण उन्नति, परगनोंके वैभव, देशकी समृद्धि, प्रजाका आनन्द-विलास, गरीबोंकी रोजी और सब प्रकारके उद्योग व्यापारसे ही उत्पन्न होते है। लोगोंको उद्योग बतला देना, गरीबोंकी रोजी लगा देना और उन्हें श्रमका योग्य बदला देना व्यापारके हाथमें है। लोगोंकी

आवश्यताको पूर्ण करना, और रसिकोंके मनोरथ सिद्ध होनेकी व्यवस्था करना भी व्यापारका ही काम है। सार्वभोम-सत्ता, व्यापारीके काम और धर्मके अधिकार इन तीनोंकी सत्ता जगतमें सब पर चलती हुई स्पष्ट देख पड़ती है।

व्यापारकी भीत सत्य और सारासार विचारकी नीवपर खड़ी होती है। व्यापारसे मतलब सच्चे व्यापारसे है, झूठेसे–सट्टे फाटकेसे-नहीं। व्यापारके दो भेद है–जुआ और सच्चा। जुआमें सौदा, सट्टा, फाटका, चौक-मूठ, वगैरह दाखिल है। सच्चा व्यापार–शुद्ध व्यापार न आता हो, तब ऐसे जुआके व्यापारकी ओर मनुष्यकी प्रवृत्ति होती है। जिस धंदेकी नीव सचाई, सारासारके विवेक और शुद्धता पर नहीं है, वह धंदा कैसा भी क्यों न हो–आज नहीं तो कभी-न-कभी थोड़े ही दिनोंमें अवश्य गिर जायगा और उसका गिर जाना ठीक भी है। बहुतसे मनुष्योंकी–और मुख्यकर जो व्यापारी नही है उनकी–ऐसी समझ हो गई है कि व्यापार बिना झूठके चल ही नही सकता है। कोई कोई ऐसा समझते है कि व्यापारमें दो तीन बोलियाँ होनी ही चाहिए–व्यापारी दो तीन बोलियाँ कहे, इसमे कुछ बुराई नही है। परन्तु ऐसा समझना भूल है। कानूनसे 'व्यापारी झूठ' को अन्याय मानकर दंड नही दिया जाता है, इसी बातसे यह नहीं कह सकते कि वह झूठ नहीं है। व्यापारका प्रत्येक व्यवहार-देना लेना–बिलकुल सत्य होना चाहिए। जो साहूकार लेन देनमें सचाई न रखता हो–जो अप्रामाणिक व्यवहार रखता हो वह कभी स्थिर उन्नतिको नही पा सकता है। प्रामाणिकता केवल नीतिकी–चरित्रकी दृष्टिसे ही आवश्यक नही है, परन्तु व्यापारमे भी उसके अनुकूल चलना उत्तम–सर्वोत्तम पद्धति है। सच्ची बरकतका, उन्नतिका, अभिवृद्धिका, यशका और सफलताका एक मात्र बीज प्रामाणिकता ही है। प्रामाणिक-

ताके साथ शाहयोगपन भी होना चाहिए। शाहयोगपन (आबरूदारी) और प्रामाणिकता जुदी जुदी बातें है। कोई व्यापारी प्रामाणिक न होकर शाहयोग हो सकता है और इसी तरह कोई आबरूदार न होने पर भी बड़ा भारी प्रामाणिक हो सकता है। प्रामाणिकपनेका सम्बन्ध लेन-देनके साथ है और आबरूदारीका सम्बन्ध हृदयके गुणोंके साथ है। समय पर लोगोंके लेन-देनको साफ करना, किसीको फँसानेकी इच्छा न रखना, प्रामाणिकतामें दाखिल है। इस प्रामाणिकताके होने पर भी मनुष्य आबरूदार नही हो सकता। अपने पड़ोसियोंकी, अपने सहयोगियोकी, औरोंके पास अकारण निन्दा करना आबरूदारोंका काम नही है। अपने बाजारमें अपने बराबरके व्यापारियोको बदनाम करना भलमनसाहत नही है। बाजारमें पड़ोसी व्यापारियोंके ग्राहकोंको तोड़ लेनेके लिए घाटा खाकर भी माल सस्ता बेच देना भलमनसाहत नही है। वास्तवमें जिस मालकी जरूरत नही है, पर इस उद्देश्यसे कि उसे कोई दूसरा व्यापारी खरीद न सके, उसका भाव बढ़ा देना भी इज्जतदारी नही है। कहनेका तात्पर्य यह है कि जो व्यवहार अपने अंतःकरणको बुरा जान पडता है, वह केवल नीति और चरित्रकी दृष्टिसे ही हीन नही समझ पड़ता है, वरन् वह व्यापारमें भी बे-इज्जती पैदा करनेवाला है।

धंदेकी खूबियॉ—फिर वे कैसी भी क्यों न हों—लाभका साधन है, इस बातको बहुतसे मनुष्य मानते है। परन्तु उन्हे जानना चाहिए कि ये खूबियॉ अपने ऊपरी मनुष्योंके विश्वासको कम करनेका कारण होकर लाभकी जगह हानि पहुँचाये बिना नही रहती। अच्छे व्यापारीको चाहिए कि वह उन व्यापारी खूबियोंका अवलम्बन कभी न करे जिनसे उसकी प्रामाणिकता और साहूकारीमें बट्टा लगता हो। यह रीति बिल्कुल ठीक नही है। व्यापारीको हमेशा प्रामाणिकता पर ही दृढ़ रहना चाहिए। प्रामा-

णिक व्यवहारमें एक प्रकारका आनन्द है। यह एक अभ्रान्त सत्य है कि प्रामाणिकता शुद्ध आनन्दकी नदी है । जहाँ प्रामाणिकता है–जहाँ साहूकारी है, वहाँ पर सर्वत्र आनन्द ही आनन्द है।

अब न्यारे–न्यारे धंदोंके मुख्य मुख्य विभागोंके सम्बन्धमें एक दो मुख्य बातें कहकर हम इस विषयको पूरा करेंगे। धंदेका पहला और मुख्य विभाग व्यापार-उद्यम है। इस धंदेका मुख्य तत्त्व यह है कि सस्ताईमें खरीदना और मँहगाईमें बेचना। जो मनुष्य इस बातको अच्छी तरह समझ लेता है कि सस्ताईमें खरीदना और मँहगाई में बेचना चाहिए, उसके विषयमें फिर यह सोचनेकी आवश्यकता नही रहती कि वह व्यापारी है या नही। जो मनुष्य ऐसे काम करता है वह व्यापारी–उद्यमी है ही। अलग-अलग मालके क्रय-विक्रयसे व्यापारियोंके नाम अलग अलग होते है। जैसे–कपड़ेके व्यापारी 'बजाज' जवाहिरातके व्यापारी 'जौहरी' चादी–सोने भूषण आदिके व्यापारी 'सर्राफ' जड़ीबूटी आदिके व्यापारी 'पसारी' इत्रके व्यापारी 'गधी' इत्यादि। इस तरह अलग-अलग मालके नामसे व्यापारियोंके जुदे-जुदे नाम है, परन्तु उन सबका धंदा एक ही तत्त्व पर ठहरा हुआ है और उस तत्त्वका नाम है—'व्यापार'।

कल कारखानेवाले। कच्चा माल खरीद कर उसे कल्पना, कौशल और परिश्रमके द्वारा लोगोंके व्यवहारोपयोगी बनाना और उसे बेचना, कारखानेवालोंका धंदा है। कल कारखानेवालोंका यह मुख्य कर्त्तव्य है कि वे बेचनेके लिए पक्का माल तैयार करें–अर्थात् कारखानेवाले कच्चे मालको खरीदें और उसे पक्का बनानेमें जो श्रम और चतुराई लगती है उसे लगाकर पक्के–तैयार मालको बेचें। अतएव कारखानेवाले भी क्रय–विक्रयकारी व्यापारी ही कहे जा सकते है। लकड़ी, ताँबा, लोहा, पीतल, वगैरह धातु और कपास

रेशम आदि पदार्थोंकी भिन्नतासे कारखानेवाले भिन्न-भिन्न नामोंसे पुकारे जाते है ।

कला-कौशल (कारीगरी)। कारखानेवाले और कारीगर दोनोंके धंदोंका परस्पर निकटका संम्बन्ध है। कारीगरोंके कला कौशलको खरीदना कारखानेवालोंका काम है। सुतार, लुहार, कसेरे, सोनी, जुलाहे, सिलावट, कुम्हार, मोची, इंजिनियर वगैरह कारीगर है । उन्होंने समय और धनको खर्च करके कारीगरी सीखी है-खरीदी है। वे जिस धंदेको करते है वह कारीगरी कहलाती है। वे अपने कला-कौशल या कारीगरीको रोजाना मजदूरीसे, ठेकेसे या मासिक वेतनसे कारखानेवालोंको बेचते है। अतएव व्यापारियोंमें इनका भी समावेश हो सकता है । कारखानेवाले इनकी मेहनत, कल्पना और कौशलको मोल लेकर लाभ उठाते है ।

खेतीबारी। कारखानेका, व्यापारका और देशके हर एक धंदेका आधार खेतीबारी पर है। खेतीबारीके धंदेमे जितना लाभ, कर्मतत्परता, श्रेष्ठता और आनन्द है वैसा किसी धंदेमे होना असम्भव है । खेतीकी उन्नति हो, तो सारे धंदोंकी उन्नति होवेगी ही-यह एक सत्य सिद्धान्त है। किसान भी एक प्रकारका व्यापारी ही है। जमीन, पानी, बीज, खात आदिको खरीदना और परिश्रमके द्वारा अनाजको पैदा करना किसानका काम है। उस पैदा हुए अनाजको किसानसे खरीद कर हर एक बाजारमें पहुँचाना ,अर्थात् उसका क्रय-विक्रय करना व्यापारीका काम है--किसान उसके पैदा करनेवाले है।

विद्यावृत्ति। आचार्य, अध्यापक, व्याख्याता, ग्रन्थकार, पत्र-सम्पादक, वकील, वैद्य, लेखक आदि विद्याका धंदा करनेवाले है। ये

अपनी बुद्धि, होशियारी, चतुराई आदिको वेतन, फीस, कीमत आदिके एवजमें बेचते है और धर्मगुरुको दक्षिणाके रूपमें उसके उपदेशकी कीमत दी जाती है । विद्यावृत्तिके ये धंदे विशेष सम्मानके माने जाते हैं, परन्तु इनमें जैसा चाहिए लाभ नही होता । न हो, परन्तु इनकी आवश्यकता बड़ी भारी है । ये लोग उन सब विद्याओंको बड़े परिश्रम और खर्चसे खरीदते है और इस रूपमें बेचते है ।

अन्यान्य फुटकर काम । दलाली, आडत वगैरह छोटे-बड़े अनेक फुटकर काम-धंदे है । उनका महत्त्व कुछ कम नही है, परन्तु इस छोटीसी पुस्तकमें उनका वर्णन करनेको जगह नहीं है ।

पूँजी ।

व्यापार करने अर्थात् मालको खरीदने, उसे बेचनेकी व्यवस्था करने, दूकान, गुमास्ता, नौकर–चाकर आदि रखनेके लिए जिस रकमकी आवश्यकता पडती है–उसीका नाम पूँजी है। धंदा चलानेके लिए जिस रकमकी अत्यन्त आवश्यकता होती है, या जिस आवश्यक–साधनके बिना धंदा चल ही नही सकता–उसीका नाम पूँजी है । पूँजीके बिना धंदेका प्रारम्भ ही नही हो सकता । यह बात स्पष्ट है कि खर्चनेके लिए रकम पास न हो तो खर्च किया ही कैसे जा सकता है ? खरीदना व्यापारका प्रारम्भिक काम है–मूलतत्त्व है। व्यापारमे खरीदके बाद इतना ही मुख्य काम बाकी रह जाता है कि उस वस्तुको बेच करके उससे सारा खर्च और अमुक दर्जेका लाभ निकाला जाय। मालके खरीदनेके बाद उसपर जो जो इखराजात (खर्च) चढ़ते है उनमें पूँजीका व्याज, भंडार और दूकानका किराया, गुमाश्तों–नौकर–चाकरोंका वेतन, विक्रीके लिए दिये हुए विज्ञापनोंका व्यय, बेचनेके लिए की

हुई चतुराई और युक्तियोंका बदला, मुख्य है। मालकी बिक्री होकर जब तक रकम हाथमें नहीं आजाती, तब तक यह सब खर्च जो घरकी रकममेंसे या बाहरसे कर्ज लेकर किया जाता है-इसीका नाम पूँजी है। या यों कहिए कि व्यापारमें- लाभ होनेकी आशासे-जो रकम लगाई जाती है-उसे पूँजी कहते है।

व्यापारमें पूँजी अत्यन्त आवश्यक है। जैसे शरीरमें प्राणकी आवश्यकता है, वैसे ही व्यापारमें पूँजीकी आवश्यता है। पूँजी बिना कोई धंदा नहीं हो सकता। प्राणरहित शरीर किस कामका ? पूँजी प्राप्त होनेके अनेक साधन है, परन्तु हमारे ख्यालमें नीचे लिखे हुए मुख्य हैं—

१ बड़े बूढ़ोंकी कमाई हुई या स्वयं कमाई हुई धन-सम्पत्ति।

२ पूँजी देनेवाली दुकानें, बैक, बहोरगत वगैरह।

३ हिस्सेदारी।

४ उधार-अपनी साखपर पूँजी उधार लाना।

पूँजी इकट्ठी करनेके ये चार साधन ही मुख्य है। इनमे जिसको जिसका सुभाता होता है वह उसीको अमलमें लाता है।

पूँजी बिना व्यापार-धंदा हो ही नही, सकता। पूँजीके बिना धंदा कर बैठना केवल मूर्खता ही नहीं वरन् एक प्रकारका लुच्चपन और दूसरोंको फँसानेका प्रयत्न है।

जिसके पास पूँजी न हो, उसे चाहिए कि वह व्यापारमें न पड़े। क्योंकि उससे व्यापार नही चल सकता। व्यापारमें जो चिन्ता, फिकर त्रास आदि होते है, वे सब खास कर पूँजीसम्बन्धी ही होते है। अर्थात् व्यापारके सारे सुखोंका आधार पूँजी ही है। सौमेंसे अस्सीसे ऊपर ऐसे व्यापारी होते है कि जो उधारकी पूँजीसे व्यापार करते है। करें;

व्यापारमें अपनी ही घरू पूँजी हो ऐसा कोई नियम नहीं है, परन्तु होना चाहिए पूँजी। *अन्ध-पङ्ग-न्यायसे व्यापार-कुशल और पूँजीवाले* मनुष्यों-को आपसमें मिलकर काम करना चाहिए। इन्हें ऐसी व्यवस्था कर लेना चाहिए जिसमें दोनोंको लाभ हो। साख ठीक हो, तो ऐसा मान लेना बुरा नहीं है कि सारे ससारकी पूँजी मेरी ही है। 'साख' व्यापारमे बड़ी भारी पूँजी समझी जाती है। यदि हम पूँजीमें व्यापारी ज्ञान, व्यापारी चातुर्य, व्यापारी कला, साख, ग्राहकोंकी रुख परखनेकी कला और विश्वासपात्रताका भी समावेश कर दें तो अनुचित न होगा।

व्यापारमे मिलनेवाले मानका महत्त्व पूँजी पर ही है—दिवालियेका कोई सम्मान नहीं करता। पूँजीवालेको कितनी ही सुविधाएँ होती हैं। स्पर्धा और खेंचातानी पूँजीवालेको विशेष दुःखदायी नहीं हो सकती। सारांश यह है कि सब नहीं तो भी बहुतसी व्यापारिक शक्तियोंका आधार पूँजी ही है। व्यापारका बल अपने पासकी पूँजी पर ही है। व्यापारमें पूँजीकी बड़ी महिमा है।

सिक्का ।

सबकी सम्मतिसे, सारी चीजोंका मोल ठहरानेके लिए लेनदेनके काममें सुभीता होनेके निमित्त जिस चीजको प्रमाणके रूपमें मान लिया हो, उसीका नाम सिक्का है। आजकल हमारे देशमें रुपया चलता है। थोडे दिनोंसे गिन्नी भी चली है, परन्तु इसका व्यवहार कम है। गिन्नीकी कीमत १५) पन्द्रह रुपया ठहराई गई है। प्राचीन समयमें अशरफी मुहर आदि सोनेके सिक्के चलते थे। ॲंगरेजी सार्वभौम-सत्तामें विशेषकर चॉंदीका सिक्का चला। इस समय रुपया चॉंदीका और गिन्नी सोनेका सिक्का है। अठन्नी, चौअन्नी, दुअन्नी, एकन्नी ये फुटकर सिक्के है। इन्हें ॲंगरेजीमें 'टाकन मनी' कहते हे। पैसा तॉंबेका होता है। पैसेका तीसरा भाग पाई होती है। चार पैसका एक आना और सोलह आनेका एक रुपया होता है। एकन्नी चॉंदीकी नहीं होती और न तॉंबेकी ही होती है। वह कॉंसे और मिश्र धातुकी होती है। दुअन्नी चौअन्नी और अठन्नी चॉंदीकी होती है। कहीं कहीं पर छोटेसे सिक्केकी एवजमें कौडियॉं और बादामे भी काममें लाई जाती है। महाराष्ट्रप्रान्त और राजपूतानेमें कौडियॉं चलती है। पहले बडोदेमे बादामें चलती थी, पर अब उनका चलन बन्द होगया। राजपूतानेमे पहले अलग-अलग राज्योंके अलग अलग सिक्के चला करते थे, अब भी कहीं कहीं चलते है। ये सिक्के चॉंदी सोने और तॉंबेके थे। यहॉं झालावाडमें ही मदनशाही चलनी अठन्नी चौअन्नी दुअन्नी आदि चॉंदीके और पैसा आदि तॉंबेके सिक्के थे, परन्तु अब कलदार रुपया चलता हे और पैसे भी ॲंगरेजी। ॲंगरेजी सिक्कोंका सर्वत्र प्रचार है।

सिक्केकी आवश्यकता। बहुतसे मनुष्योंके हृदयमें यह प्रश्न सहजमें ही उठ खड़ा होता है कि सिक्केकी आवश्यकता क्यों

खड़ी हुई ? व्यापार प्रारंभ करते ही सिक्केकी अवश्यकता जान पड़ती है। अदलाबदली (विनिमय) करना व्यापारकी सीढ़ी है। एक मनुष्यके पासकी वस्तुकी दूसरेको आवश्यकता होती है और दूसरेके पासकी वस्तुकी तीसरेको। एक दूसरेकी आवश्यताको पूर्ण करनेकी रीतिका ही नाम अदलाबदली (विनिमय) है। कल्पना कीजिए कि खोती-माणिकपुरेका अमरा चमार जूतियाँ बनाता है और उसे ज्वारकी आवश्यकता है, और खोतीके ओंकार मालीके यहाँ ज्वार है—उसे जूतेकी आवश्यकता है। ऐसी सूरतमें अमरा और ओंकार आपसमें जूते और ज्वारसे अदलाबदली कर लेंगे। परन्तु यदि इन दोनोंको उन वस्तुओंकी आवश्यकता न हुई तो उन्हें अपनी इष्ट वस्तु पानेके लिए इधर उधर भटकना पडेगा और इस काममें उनका बहुत समय व्यर्थ चला जायगा। इन सब अड़चनोंको मिटानेके लिए सिक्केकी आवश्यकता है। सिक्केके एवजमें चमार जूता बेच देगा और अपनी इष्ट वस्तु जहाँ मिलेगी वहाँसे खरीद लावेगा।

सिक्केके लिए सोना चाँदी पसन्द किये जानेका कारण। व्यापारमें विनिमयकी बड़ी आवश्यकता होती है। विनिमय जैसे व्यापारमें प्रथम सोपान है वैसे ही सिक्केकी उत्पत्तिका भी कारण है। व्यवस्थापूर्वक, शीघ्रता और आसानीके साथ विनिमय हो जानेके लिए जो साधन खोज निकाला गया है-उसीका नाम सिक्का है। सिक्केके लिए जो चीज ठहराई जाय वह नियमित और लेन-देनमें सुभीतेकी होनी चाहिए।

सारे सुधरे हुए देशोंमें चाँदी और सोना ही सिक्केके तौर पर काममें लाया जाता है। ऐसी सूरतमें यह प्रश्न सहजमें ही खड़ा होता है कि

इस कामके लिए ये दोनों धातुयें ही क्यों विशेषतया पसन्द की जाती है ? इस बातका हम यहाँपर संक्षेपमें विचार करेंगे। *

जो वस्तु सबको प्यारी हो, जिसके मूल्यके समान विभाग हो सकते हों और जो शीघ्र नष्ट न हो जाती हो, वही वस्तु क्रय-विक्रयका साधन होनेके लिए उपयुक्त समझी जाती है। ऐसी चीजें थोड़ी ही है। ये तीनों गुण धातुओंमें है। इसी कारण प्राचीन कालसे विविध देशोंमें लोहा, ताँबा, चाँदी और सोना सिक्केके व्यवहार में लाया गया है। इस तरह धातुओंका व्यवहार सिक्केके लिए हुआ है, परन्तु धातु-धातुमें भी भेद है। कोई धातु पृथ्वीपर बहुत मिलती है और कोई कम। जो बहुत मिलती है उसका विशेष मोल नहीं होता। यदि सिक्केके तौर पर उसका उपयोग किया जाय तो वह अधिक परिमाणमें बार बार देना-लेना पड़े, सग्रह करना हो तो उससे बहुतसी जगह रुके, और लूट-खसोटके समय छुपाने या देशान्तरको पहुँचानेकी आवश्यकता हो, तो कठिनाई पड़ जाय। चाँदी सोनेका सिक्का होनेमें ये बातें नहीं होतीं। सिक्का बननेकी इनमें योग्यता है। बहुत ही प्राचीन समयसे ये मनुष्योंको प्यारे लगते है, अतएव इनके बदले चाहे जब माल मिल सकता है। इनके मोलसे समान सूक्ष्म विभाग हो सकते है। बहुत समय तक इनका नाश नहीं होता। इन्हें सग्रह करनेमें बहुत जगह नहीं रुकती। इन्हें छुपानेमें आसानी पड़ती है। इनसे लेन-देनमें भी आसानी होती है और इनमें दो-एक गुण और भी है। अन्यान्य पदार्थोंमें अलग अलग जातियाँ होती है। गेहूँ आठ दस तरहके होते है, घोड़े वगेरह पशु विविध जातिके होते हैं, अतएव इनके मोलमें फरक होता है। परन्तु चाँदी सोनेमें यह

* विशेष जाननेकी इच्छा रखनेवालोंको हमारा अर्थशास्त्र या पंडित महावीरप्रसादजी द्विवेदीकृत 'सम्पत्ति शास्त्र' देखना चाहिए।

बात नहीं है । अन्य वस्तुओंके मोलमें बहुत फेरफार हो जाता है । कल्पना करो कि बस्तरामने हजार मानी गेहूँ इकट्ठे कर रक्खे हैं और फसल अच्छी पैदा होनेसे गेहूँका आधा भाव हो गया; ऐसी सूरतमें बस्तरामको एकाएक आधा नुकसान हो जायगा और अगर फसल अच्छी पैदा न हुई तो वह एकाएक मालामाल हो जायगा । यह बात चाँदी सोनेकी नही है । हमारे कहनेका यह मतलब नहीं है कि चाँदी सोनेकी कीमत कम--ज्यादा होती ही नही है, होती है, परन्तु बहुत समयके बाद, यहाँ तक कि कभी कभी तो शताब्दियाँ व्यतीत हो जाती हैं । अमेरिकाकी खानें निकलनेपर जो सोने चाँदीके भावमें फेरफार हुआ, उसके बाद आजतक कोई बड़ा फेरफार नहीं हुआ । इससे मुद्दती लेन--देन करना हो, तो सोने-चाँदीसे करना ठीक है । क्योंकि--चाँदी सोनेका जितना संग्रह संसारमें है उसमें साधारण कमी बेशी होने पर भी-उनके मोलमें विशेष फेरफार नही हो सकता । इस प्रकार चाँदी सोनेमें स्थिर रहनेका, सूक्ष्मविभाग हो सकनेका, और समान कीमत निभा सकनेका गुण है । अतएव ये धातुयें सिक्केकी योग्यता रखती है ।

हमारा रुपया। इस समय हमारा रुपया चाँदीका है । इसका वजन १८० ग्रीन है । ग्रीन अँगरेजी वजन है । १५ ग्रीनका एक माशा और १२ माशेका एक तोला होता है । १८० ग्रीनमें १६५ ग्रीन चाँदी होती है और १५ ग्रीन हलकी धातु होती है । इस हलकी धातुके मिलानेसे रुपयेमें कड़ाई और झणकार होनेका गुण आ जाता है । पहले सरकारी टकसालमें चाँदीके वजनके बराबर रुपये बना दिये जाते थे । सरकारी टकसालकी मजदूरी १५ ग्रीन तुच्छ धातुके मिलानेसे निकल आती थी । १५ ग्रीन हलकी धातुके मिलानेका रिवाज इस कारण पड़ा कि टकसालका श्रम निकल आवे, सिक्का कड़ा हो और वह बजने लगे ।

चाँदी सोनेकी कीमत । २५-३० वर्ष पहले हमारे देशमें १०० तोले चाँदीके लगभग ११५ रुपये बनते थे और एक तोला सोना १७-१८ रुपयेमें मिलता था । अब १०० तोले चाँदीके ७०-७२ रुपये होते है । इसमें कोई आश्चर्य नही । खपतीकी अपेक्षा पदार्थका संग्रह विशेष हो जायगा तो पदार्थकी कीमत कम हो जायगी, अनेक कृत्रिम सिक्कोंका चलनकर सोनेकी पैदाइश ज्यादा होनेपर भी--उसकी कीमत बढ़ानेमें विलायती साहूकार अपनी व्यवहारचतुरतासे सफलताको पागये, परन्तु चाँदीके सम्बन्धमें उन्हे सफलता न हुई । चाँदीकी पैदाइश बढती गई, परन्तु उसकी खपती न बढ़ी । चाँदीका भाव गिरता ही गया । यहाँ तक कि १०० भर चाँदी ५५-६० रुपयेकी ही रह गई । ज्यादा सस्ती न हो इसके लिए गवर्नमेंटने अनेक तरकीबें सोची, परन्तु न चली । अभी हालमें गवर्नमेंटने चाँदीकी आमदनीपर ६।) रुपये सैकडेकी जगह १६।) रुपये सैकडा जकात लगाई है ।

टकसाल बंद । १८९३ ईस्वीतक टकसालमें १०० रुपयेभर चांदी देनेसे १०० रुपये बना दिये जाते थे, परन्तु अब यह बद है । अब यदि किसीको रुपये बनवाना हो तो एक रुपयेकी १६ पैनीकी भाँति चाँदीकी ठहराई हुई कीमतका सोना देना पड़ता है । इस सोनेके एवजमें रुपये बना देनेका गवर्नमेंटने रिवाज जारी रक्खा । भारतमे दो जगह अँगरेजी टकसाले है । एक कलकत्तेमें और दूसरी बम्बईमें । आज १६-१७ वर्षसे ये टकसाले बन्द है । लोग इन टकसालोंसे प्रतिवर्ष ९ करोड़ रुपये बनवाते थे । सरकारने शायद यह सोच कर कि टकसाल बंद करनेसे रुपया कम होनेके कारण गढ़े हुए रुपये निकल आवेंगे और सहजमें ही चाँदीका भाव बढ़ जायगा, टकसालें बंद करदी । ऐसी गणना की गई है कि

सरकारी टकसालमें कुल २५०—३०० करोड़ रुपये बनाये गये है। कितने ही मनुष्योंका यह भी अनुमान है कि एक दो करोड़ रुपये प्रति बर्ष टूट—फूट कर गलानेमें चले जाते होंगे।

रुपयेकी कृत्रिम कीमत। आजकल हम जिस रुपयेको काममें लाते है, वह कलदार रुपया कहा जाता है। यह रुपया कृत्रिम सिक्का है। असली कीमतकी जगह ठहराई हुई कीमत कुछ और ही हो, तब कृत्रिम नाम रक्खा जाता है। जो सच्चा नहीं वही कृत्रिम है। अच्छा सोचिए कि रामकुमारने ७०—७२ रुपयेकी चॉंदी ली। उसे १०० भर चॉंदी मिल गई। इससे १०० भर चॉंदीके पूरे सौ रुपये मिल गये। कॉंसेके मिश्रणसे सरकारी मजदूरी निकल आई। ऐसी सूरतमें ७०—७२ के १०० रुपये होगये। लोगोंके लिए टकसाल बंद है, परन्तु सरकार ऐसा ही करती है। ७०-७२ से भी कमके मालकी कीमत १००रु० लेती है। अतएव हमारा रुपया असली नहीं बनावटी है।

भारतवर्षका व्यापार यूरोप, अमेरिका, आदि देशोंके साथ चल रहा है। इन देशोंके साथ देन-लेनका प्रसंग आना साधारण बात है। इंग्लैंडमें पौंड, शिलिंग, पैसका सिक्का चलता है; अमेरिकामें डालर, सेंटका, फ्रास व जर्मनीमें फ्रेंक, चीनमें टेल और जापानमें पेनका। अतएव व्यापारियोंको न्यारे—न्यारे देशोंके सिक्कोंका ज्ञान रखना चाहिए। हमारे सिक्कोंका उन उन देशोंके सिक्कोंके साथ क्या सम्बन्ध है जिन जिन देशोंके साथ हम व्यापार करते है, इस बातका जानना व्यापारीके लिए अत्यन्त आवश्यक है। हम आगेके कोष्टकमें यह बतलाते हैं कि कुछ देशोंके सिक्कोंके साथ पौंडकी कीमतका क्या सम्बन्ध है।

नं०	देश	सोनेका सिक्का	ग्रीन वजन
१	अरजटाईन	अरजनटाइनो=५ पैसो पीस	१२४-४४
२	आस्ट्रया-हंगरी	ड्यूकेट	५३-८५
३	ब्राजिल	१० मीलरिस	१३८-३५
४	चीली-कोलंबिया और उरागुआ	उब्लुन=५ पैसो पीस	११७-७
५	चीन	०	०
६	डेनमार्क नार्वे और स्वीडन	१० क्रोनपीस	६९-१४
७	इजिप्ट	१०० पीयाट्रेपास इजिप्सियन पौंड	१३१-१८
८	फिनलैंड	१० मारकापीस	४९-७८
९	फ्रांस	१० फ्रेंक पीस	,,
१०	जर्मनी	क्रोन=१० सइकमार्कस	६१-४
११	ग्रेटब्रिटन	सावरन-पोंड	१२३-२७
१२	हालेंड जावा और नादरलेंड	ड्यूकेट	५३-९२
१३	भारतवर्ष	गिन्नी=१५ रुपया	१८०-०
१४	जापान	२० येनपीस	२५७-२१
१५	मेक्सिको	१० पेसो पीस	२६१-१२
१६	ओटमन-एम्पाएर व तुर्की	टर्किश पौंड १ ० पीयास्टे	१११-३६
१७	परशिया	टोमन=२०० शाही	५७-९०
१८	पेरू	लीबा=१० शोल	१२३-२७
१९	पोर्चुगाल	कोरोआ=१० मीलरीस	२७३-७०
२०	रशिया	इम्पीरियल=१५ रुबल	१९९-१०
२१	स्पेन	डब्लुन=१० एकसूडो	१२९ ४३
२२	अमेरिका	इगल=१० डालर	२५८-०

कीमत पौं. शि. पे.	चाँदीका सिक्का	ग्रीन वजन
०-१९-१०	पैसो=१०० सेन्टेसीमोस	३८५-८
०-९-४	फ्लोरीन-गुल्डन=१०० कुटसर	१९०-५
१-२-५॥	मिलरिस=१००० राइस	१९६-८
०-१८-९	पैसो=१०० सेन्टेवो	३८५-८
,,	टेल=१० मेइस=१००कोंडरीन	५८३-३
०-११-०।	कोन=१०० आर	११५ ७
१-०-३॥	पीयास्ट्रे	२१ ६
०-७-११॥।	मार्का=१०० पेनी	८०-०
,,	५=फ्रेंक पीस १ फ्रेंक=१०० सैंटेसीमोस	३८५ ८ ७७ २
०-९-९॥	राइक मार्केस	८५-७
१-०-०	क्राऊन ५ शिलिंग, १ शिलिंग=१२ पैनी	४३६-४,८७-३
०-९-४॥	रेक्सडालर=२॥ फ्लोरीन	३८५-८
१-९-२॥	रुपया=१६ आने=६४ पैसे	१८०-०
२-०-११॥	येन=१०० सेन	४१६-०
२-०-५।	पैसो=१०० सन्टवो	४१७-८
०-१८-०॥।	पियास्टे=४० पारा	१८-६
०-९-५	खान=२० शाही	७१-०
१-०-०	शोल=१० डीनर, १०० सेंट	३८५-८
२-४-४॥।	टेस्टन=१०० राइस	३१८-०
१-११-९	रुबल=१०० कोपेकस	३०८-६
१-०-७।	५ पसेटा पीस पसेटा=१०० सेंटेसीमोस	३८५-८ ७७-२
२-१-१।	डालर=१०० सेंट, ट्रेडडालर	४१२-५,४२०-०

साख।

'साख' शब्दका उच्चारण होते ही उसका मतलब ध्यानमें आजाता है परन्तु उसका लिखना और समझना कठिन हो पड़ता है। जिस मनुष्य पर दिये हुए मालकी कीमत चुका देनेकी खातरी हो वही उसकी साख है। कहे हुए वचन पालनेकी खातरी, लिये हुए माल या रकमको पीछा लौटा देनेका भरोसा और उसमें गडबड़ न कर देनेका एतबार, इन सबका कारण मनुष्यकी साख ही है। मनुष्योंको विश्वास हो जाय कि अमुक मनुष्यको दिया हुआ नया माल कभी डूब नही सकता, ऐसे विश्वासको उत्पन्न करानेका नाम ही साख कायम करना है।

साख और उसका महत्त्व—जगत्में जितने व्यापार होते है उन सबका आधार साख पर है। साख न हो तो व्यापार चल ही नही सकता। व्यापारमें साख एक मुख्य चीज है और बड़ी भारी पूँजी है। पैसे-टकेके व्यापारमें कितना महत्त्व है, इस बातको दोहरानेकी आवश्यकता नही है। पैसा एक बड़ी भारी शक्ति है—सारे जगत्के व्यवहारका साधन है। पैसा केसी बड़ी चीज है, इसका ज्ञान प्रायः सभीको होता है। 'बिन टका टकटकायते' 'कौड़ी बिन मनुष्य कौड़ी कामका भी नही' इत्यादि वाक्य छोटे-छोटे गाँवोंके मनुष्योंके द्वारा भी सुनाई पड़ते है। परन्तु साखका महत्त्व पैसेसे भी विशेष है। अकेले पैसेसे जो काम नही हो सकता, वह काम साखवालोंके जवान हिलानेसे ही हो जाता है। पैसेका कोई माप होता है, परन्तु साखका नहीं हो सकता। यदि कोई पूछे कि पैसेकी आवश्यकता क्यों जान पड़ती है ? तो इसका उत्तर केवल यही है कि साख बढ़ानेके लिए। ऐसा कोई नियम नही है कि जिसके पास पैसा हो उसकी साख भी होना ही चाहिए। पैसेवाले होने पर भी साखसे कोरे मनुष्य देखे जाते है। साखवाले मनुष्यको पैसेकी कही और कभी अड़चन नहीं

पड़ती। इससे यह बात निर्विवाद सिद्ध है कि पैसेकी अपेक्षा साखकी कीमत अधिक है। यहाँ पर हम एक आख्यायिकाको लिखनेके लोभ-को नहीं रोक सकते। यह आख्यायिका हमने बचपनमें अपनी पूज्यतम दादीकी गोदमें बैठकर सुनी थी। कहानी यह है—

"कोई १००० वर्ष पहले झालरापाटनका पुराना नाम चन्द्रावती था। यह नगरी बड़ी अच्छी थी। पाँच पाँच कोसके घेरेमें नगर बसा हुआ था। वहाँ बड़े बड़े धर्मात्मासेठ-साहूकार रहते थे। उन्हीं लोगोंने कैसे कैसे विशाल मंदिर बनवाये थे जो आज भी उनकी महत्ताको प्रकट कर रहे है। सात-सहेलियोंके मन्दिरकी, कारीगरी शान्तिनाथजीके मन्दिरकी उत्तमत्ता, चन्द्रभागाके तटपरके खंडहर, सातशिला और आसपासकी प्राचीन वस्तुयें क्या प्रकट कर रहीं हैं? इस स्थानकी प्राचीन समयकी अपूर्व समृद्धिशालिता या और कुछ? इसी समृ-द्धिशाली नगरमें पहले एक साहूकार रहते थे। उनका बैंक या उप-पद था भैसा। सुनते है कि इन्हींके नामसे भैसापाडा मुहल्ला बसा था। ये एक समय गिरिनारकी यात्राको गये। उन दिनो चोर डाकु-ओंका बड़ा भय रहता था। एक दिन मार्गमे संघ लुट गया, पास कुछ न रहा। तब वे सिद्धपुरके एक सेठके यहाँ पहुँचे और उन्होंने कुछ रकमकी हुँडी लिखदी। सेठने कुछ गिरवी रखनेको कहा। इनके पास तो जो कुछ था लूटमें चला गया था। इन्होंने तुरंत अपनी मूँछका एक बाल उखाड़कर रख दिया। सेठको भरोसा हो गया। परन्तु हँसीमें उसके लड़केने कह डाला "कि बाल तो है, परन्तु बाँका है।" भैसा शाहने कहा कि "बाँका है परन्तु बाँके मरदोंका है।" पिताने लडकेको दबाया और भैंसाशाहकी हुंडी उसी दम फाड़कर कहा कि "यह घर आपका ही है जितना चाहे द्रव्य ले जाइए।" एक अनजाने व्यक्तिको साखके बळ पर विदेशमें इस तरह रुपया मिल गया। इस

रुपयेको भैंसाशाहने व्याज सहित बड़े हर्षके साथ कुछ समयमें भेजकर अपनी मूँछका बाल मँगवा लिया । जिसकी साख नहीं उसका कुछ नहीं । भैंसाशाहकी तरह हरएकको अपनी साख रखनी चाहिए ।

साखका जन्मस्थान । साख ऐसी महत्त्वकी चीज है, परन्तु वह कहाँ पैदा होती है ? कैसे बढती है ? इत्यादि प्रश्न अपने आप खड़े होते हैं । देखा जाय तो साखके उत्पन्न होनेका स्थान नैतिक व्यवहार-सदाचरण है । साख बँध जानेका मुख्य साधन कहेके अनुकूल चलने. लिये हुएको ठीक समय पर दे देनेका भरोसा जमा देने और परिस्थितिकी अनुकूलता होनेमें है । घर बार, माल-मिलकियत, जान-पहिचान, स्नेह-सम्बन्ध, रसाई और जेवर वगैरह पर भी साखका आधार है । आजकल हमारे देशमें ऐसा भी देखा जाता है कि जो लोग साखके योग्य हैं, जो सदाचारी सत्यवादी और सज्जन है उन पर एतबार नहीं किया जाता है और जो केवल धनवान् या व्यापारी होने पर भी उक्त सद्गुणोंसे हीन हैं उन पर विश्वास किया जाता है—यह बड़े आश्चर्य और दुःखकी बात है ।

अव्यवस्थित साख । अँगरेजीमें जिसके लिए Disorganised Credit System कहते है उसीका नाम हमारे यहाँ अव्यवस्थित साख है । साख व्यापारका प्राण है । साख सारे व्यवहारका आदि कारण है । साख न हो तो व्यापार, व्यवहार, धंदा, रोजगार वगैरह कुछ नहीं चल सकते । इससे आवश्यक है कि साख शुद्ध रक्खी जावे—उसमें *मलिनता न आने पावे । आजकल हमारे देशके प्राचीन उद्योग-धंदे* डूब रहे हैं और नवीन धंधे हाथमें आते नहीं है । नये धंदे पैदा करना तो दूरकी बात है हमें अपने प्राचीन उद्योगोंकी रक्षा करना ही नहीं आता । परन्तु इस बातका विचार करना आवश्यक है यह अनहोनी भी क्यों हो रही है । इस सारे अनर्थकी जड़ अव्यव-

स्थित साख ही है। और और देशोंमें २-३ रुपये सैकड़ा वार्षिक-व्याजसे रुपया देनेवाले सैकड़ों धनी है, पर हमारे देशमें ८-९ रुपये सैकड़े पर भी थोड़ी बहुत रकम देनेवाले कठिनतासे मिलते है, सो भी दूना-तिगुना चाँदी सोनेका माल गिरवी रखने पर। ऐसी स्थिति होनेका कारण क्या हे? इसका उत्तर देना कुछ कठिन नहीं है। यदि कोई इसका कारण 'पूँजीकी कमी' कहे तो ठीक नही हैं। क्योंकि सेविंगबेंकोंमें, सरकारी प्रामेसरी नोटोंमें, म्युनिसिपालिटीमे, पोर्टट्रस्ट वगैरह अर्ध-सरकारी और सरकारी सस्थाओके खातोंमे ३-३॥ रुपया सैकड़ेके व्याजसे ५०-६० करोड रुपया रुका हुआ है। लगभग तीनसौ-चारसौ करोड रुपया जेवर और जमीनमे गड़े हुए मालके रूपमें रुका हुआ है। इस बातको स्वीकार करनेमें कोई आपत्ति नही कर सकता। ऐसी स्थिति होनेका कारण सिवा इसके और क्या हो सकता है कि अव्यवस्थित साख है-वह ठीक नही है।

हमारे देशके अनेक धनवानोके व्यवहार भयंकर लुटेरों ऐसे देख पड़ते है। बड़ा ही भयंकर व्याज, हिसाब किताबकी कुटिलता और कर्ज लेनेवालेके साथ गुलामके ऐसा व्यवहार उनमें मुख्य है। परन्तु इसका कारण ढूँढ़ें तो अव्यवस्थित साखके सिवा और कुछ नही है।

सरकारी पोस्टआफिसमें कई वर्षोसे वी पी. पार्सलका रिवाज जारी हो गया है। यह रिवाज प्रति वर्ष बढता जाता है-और आगे भी बढ़ते जानेका पूरा विश्वास है। पोस्ट विभागकी १९०९-१० की रिपोर्टके देखनेसे जान पड़ता है कि उस सालमें ८ करोड़की कीमतके वी. पी. हुए। कलकत्तेसे २० लाख वी. पी हुए और उनकी कीमतके २३५॥ लाख रुपये पोस्टआफिस द्वारा वसूल हुए। बंबईसे ९॥। लाख वी. पी. हुए और ११४ लाख रुपये डाकघर द्वारा वसूल हुए। इसका कारण क्या है? ग्राहकोंको व्यापारीका विश्वास नहीं है और व्यापारीको ग्राह-

कोंका। चार चार आनेका भी ग्राहक और व्यापारी आपसमें विश्वास न करें यह क्या सूचित करता है? साखकी अव्यवस्थितता या और कुछ?

एक समय हम दीवान बहादुर पं० परमानन्दजी चतुर्वेदीके साथ छावनी (झालवाड़-झालरापाटन) के सर्वसाखिया बागमें एक बेंच पर बैठे हुए विद्या-विलासकी बातें कर रहे थे। बातों-ही-बातोंमें इंडियनप्रेस प्रयागके उस नियमकी चर्चा छिड़ गई जो उसने थोड़े समय पहले बनाया था। वह नियम यह था कि वी. पी. से किसीको पुस्तकें न भेजी जाँय, रुपया नक्द् कार्यालयमें आजावे तब पुस्तकें भेजी जायें। दीवान साहिब पुस्तकोंके बड़े प्रेमी है। प्रायः प्रतिदिन उनके नामसे वी. पी., रजिस्टर्ड पोस्ट, बुकपोस्ट आदि पार्सलें आया ही करती थीं। इंडियन प्रेसकी प्रायः सारी हिन्दी पुस्तके उन्होंने मँगवाई थी। हमारे द्वारा भी अनेक हिन्दी, गुजराती, मराठी और बंगाली पुस्तकें उन्होंने मँगवाकर पढ़ी। जहाँ तक हम जानते हैं उन्होंने कभी कोई मँगवाया हुआ पार्सल नही लौटाया है। इंडियन प्रेसके इस नियमको उन्होंने बहुत बुरा समझा—इससे उन्हें ग्राहकोंका प्रत्यक्ष अपमान होता हुआ जान पड़ा। जब हमने इस नियमके साथ ही उस नियमका—उस व्यापार-कलाका मिलान कर दिखलाया जो 'हिस्टोरियन हिस्टरीज आफ दी वर्ल्ड' के प्रकाशकोंने की थी तो हम लोगोंके हृदयमें विविध भावोंकी तरंगें उठ आई। उसने नोटिस दिया था कि "जो कोई शख्स हमारे ग्रन्थका नमूना चाहें, हमें सूचना दे। हम, उन्हें अपने ग्रन्थकी—जिसमें कि कई जिल्दें है—एक जिल्द भेजेंगे। पसन्द आने पर हमें सूचना दें। हम उनका नाम ग्राहकोंमें दर्ज कर शेष जिल्दें भिजवा देंगे। जिनके पास एकदम रुपया देनेको न हो वे किस्तबन्दीसे रुपया दे दें और यदि पसन्द न पड़े तो नमूनेकी जिल्दको रजिस्टी द्वारा वापसकर दें।

रजिस्ट्री आदिके खर्चके लिए ।||) के टिकट जिल्दके साथ भेजे जाते हैं । ” कौन अँगरेजीका विद्वान् नहीं जानता कि इंसाइक्लो-पीडिया ब्रिटानिकाका नवीन संस्करण कई विद्वानोंने खरीदा और उनमेंसे कई एकने किस्तवार रुपये जमा किये । इस प्रकारकी व्यापार-कला कार्यकारी हो सकती है, या इंडियन प्रेस वाली ? अच्छा अब हम विचार करें कि इंडियन प्रेसने ऐसा क्यों किया और बहुतसे ग्राहक उसको रुपया भेजते हुए क्यों अचकचाते हैं ? भारतमें ऐसी दशा क्यों है ? तो उत्तर यही मिलता है कि देशमें अव्यवस्थित-साख फैली हुई है ।

पूँजीवाले और पूँजीके अभावमें पैर घिसनेवाले आदमियोंका मेलजोल हो जानेमें अभी बहुतसी बाधायें दृष्टिगोचर होती है । ‘ क्या करें पूँजी नही है ’ ‘ किसे दें पूँजी फँस जानेका डर है ’ इत्यादि एक दूसरेके विरुद्ध आजकल शिकायतं सुन पड़ती है । इसका कारण ढूँढें तो वही अव्यवस्थित-साख देख पड़ती है । हमारे कितने ही धंदे अनियन्त्रित-व्यापार-पद्धतिके कारण पटापट टूटते हुए चले जा रहे है । इसके सिवा अन्य कई व्यापारिक चालाकियोंके कारण भी व्यापार चौपट हो रहा है । इस राष्ट्रघातकी परिस्थितिका कारण क्या है ? वही अव्यवस्थित साख । ‘ साख नही है–साख नहीं है ’ इस तरहकी पुकार सर्वत्र सुन पड़ती है । सच कहें तो आजकल हमारे देशमें साखका ही घोर अकाल पड़ा हुआ है । जो साख है भी सो अत्यन्त अव्यवस्थित है । इसीके कारण हम अनेक अनर्थकारी प्रायश्चित्त भोग रहे है और इसमें तिलभर भी सन्देह नहीं है कि ऐसी अवस्था रही तो आगे भी भोगते ही रहेंगे !

साख अर्थशास्त्रके धनविज्ञानके अत्यन्त गहन और महत्त्वपूर्ण विचा-रका विभाग है । इस विभागमें इस बातका स्वतन्त्र और विस्तृत वर्णन होता है कि साख कैसे पैदाकी जाती है, कैसे बढ़ाई जाती है, उसके न

होनेसे राष्ट्रको और व्यक्तिको कितने कैसे और किस तरहके नुकसान उठाना पड़ते है और उसका राजकीय तथा सामाजिक स्थिति पर क्या प्रभाव पडता है । अँगरेजी भाषामें एक बड़ी ही कीमती पुस्तक है जिसका नाम Gaspel of credit-साखकी गीता है । इसमें साख पर अच्छी तरह विचार किया है । हमारी राष्ट्रीय भाषा हिन्दीमें-आर्यभाषामें-साखके विवेचनकी कोई अलग पुस्तक नहीं प्रकाशित हुई । जो भाषा भारत ऐसे विशाल देशकी भाषा है-जो भारतके उद्धारका और उसीके साथ लोकोद्धारका साधन हो सकती है-उस आर्यभाषामें ऐसे महत्त्वके विषयों-पर ग्रन्थोंका न होना कितनी लज्जाकी बात है ? ऐसी स्थितिमें यदि यहाँ पर अव्यवस्थित-साखका साम्राज्य न हो तो और क्या हो? क्या इस सारे अनर्थका घोर पाप देशभक्तिका दम भरनेवालों पर नहीं है? क्या बड़े बड़े ग्रेजुएट और अनुभवी विद्वान् इस कलङ्कसे निर्मुक्त हो सकते है ? क्या प्रत्येक विचारशील धनी मानी और विद्वानों पर इस विषयमे दोषा-रोपण करना अन्याय है ? खैर ! ग्रन्थ नहीं है तो जबतक इन लोगोंके कान खड़े न हों और आँखें न खुलें, तब तक हम अपनी ही टूटी-फूटी भाषामें कुछ लिखें ।

सामाजिक परिस्थितिका प्रभाव । हम पहले बतला चुके है कि पोस्टआफिसकी वी पी और मनीआर्डर आदिकी सरल पद्धतिकी ओर सबका ध्यान खिंच गया है । इसका स्वाभाविक परिणाम यह होना ही चाहिए कि उधारके लैन-दैनकी साखमे कमी हो जाय । इसके सिवा अव्यवस्थित-साख होनेके कारणोंमें हमारी सामाजिक पद्धति भी एक कारण है। हमारे व्यापारियोंमें जाति-पाँतिका नियम भी बहुत देखनेमें आता है । असलमें व्यापारके कामोंमें जाति-पांतिके सम्बन्धका विचार भी न उठना चाहिए । जाति-पाँतिका सम्बन्ध गौण है, मुख्य नहीं । व्यापारमें मुख्य दृष्टि लाभकी ओर होती है—उसमें अन्य किसी मार्गकी ओर

दृष्टि जा ही नहीं सकती है। सच्चे व्यापारके व्यवहारमें जाति-पाँति धर्मपंथ वगैरह अपने आप दब जाते है । यहाँकी साख न बँधनेका एक यह भी कारण है कि हमारे यहाँ पर प्रायः मारवाड़ियोंके यहाँ मारवाड़ी, क्षत्रियोंके यहाँ क्षत्रिय, भाटियाओंके यहाँ भाटिया, पारसियोंके यहाँ पारसी, बोहरोंके यहाँ बोहरा, इस प्रकार जाति-पाँतिके विचारसे रक्खे हुए कारिंदे होते है । इस सामाजिक रीतिका साखपर क्या परिणाम होता है सो किसी सूक्ष्मदर्शीसे छुपा नही है। किसी जाति और किसी मतमें अधिक धनवान् होते है । इन धनवानोंसे जैसा चाहिए वैसा लाभ उस जाति या मतके मनुष्योंके सिवा और न उठा सकें, यह क्या बड़े भारी आश्चर्यकी बात नहीं है? थोड़ी देरके लिए हम इस व्यवस्थाको एक तरहसे अच्छी ही क्यों न मान लें–मत, जाति और सम्बन्धके विचारसे साखका होना ठीक ही समझ लें, तो अच्छा ही है ! उन सब जनोंके लिए हम इसे नामरूपहीन बीमेकी व्यवस्था कह सकते है और वह भी किश्त बिना जमा किये ही काम देनेवाली !

अन्यान्य कारण। धनवान् लोग ज्ञानकी कदर नहीं करते यह भी अव्यवस्थित साखका एक कारण है। हमारी वर्तमान परिस्थिति ऐसी है कि उसमें यह एक नियमसा जान पड़ता है कि धनवान् लोग बहुधा ज्ञानके शत्रु होते है। इस देशके लिए यह कहावत पूरे तौरसे लागू होती है कि 'लक्ष्मी और सरस्वतीका सदा बैर रहता है।' सारे संसारके कवियोंके शिरोमणि महाकवि कालिदासने भी अपने सुप्रसिद्ध रघुवंश महाकाव्यमें इन्दुमतीके स्वयवरके समय एक विशिष्ट राजाकी प्रशंसामे सुनन्दाके मुखसे कहलाया है कि– 'निसर्गभिन्नास्पदमेकसंस्थमस्मिन्द्वयं श्रीश्च सरस्वती च।' व्यापारी, ज्ञानकी कीमत समझनेवाले विद्वान् होने चाहिए। यदि वैसे न भी हों तो साधारण रीतिसे ज्ञानके हितैषी तो होने ही चाहिए। एक बात और भी है और वह यह है कि धनवानोंका ध्यान,

जितना चाहिए उतना, इस बातकी ओर नहीं होता कि वे इस ओर देखें कि अमुक व्यक्तिमें, नीतिका-सद्गुणोंका निवास है या नहीं । इसके सिवा वे नीतिकी कल्पना भी विलक्षण रीतिसे करते है । बहुतेरोंका विचार तो ऐसा होता है कि छापा मारनेवाला-दूसरोंके पैसोंको डुबानेवाला और झूठा बातूनी व्यापारी खूब कमाई कर सकता है । यह विचार कितना भयंकर है, इस बातको एक मामूली आदमी भी समझ सकता है । परन्तु ऐसे बहुतसे धनवान् देखनेमें आते है कि जो-अपने मालिकके साथ लुच्चपन करनेवाले, विश्वासघात करनेवाले और खुल्लमखुल्ला-अप्रामाणिक रहनेवाले पुरुषोंको भी अपने हिस्सेदार, अपने मुनीम या अपने गुमाश्ते मुकर्रर करके खूब धड़ाकेसे धंदा चलाते है । ऐसी दशाके होनेका कारण व्यवस्थित साखका न होना ही है ।

उपाय । अब यह विचार करना आवश्यक है कि इस अव्यवस्थित साखको व्यवस्थित करनेका भी कोई उपाय है या नही । इस प्रश्नके उत्तरमें सबसे पहले जो बात सूझ पड़ती है वह यह है कि उधारका व्यापार सबसे पहले बन्द किया जाय । दूसरा उपाय यह है कि सम्भूय-समुत्थानकी-हिस्सेदारीकी पद्धतिसे व्यापार चलाया जाय और इसमें सरकारी सहायता भी रहे । इसके सिवा धनवानोंमे ज्ञान और नीतिका पूरा पूरा प्रचार भी किया जाना चाहिए । इतना हो जाने पर हमारा विचार है कि अव्यस्थित साख नहीके बराबर हो जायगी और व्यवस्थित-साख फैल जायगी । यहाँपर साखके विषयमें हम अपनी लघु बुद्धिके अनुसार इतना ही लिखकर इस प्रबंधको पूर्ण करते है । साथ ही आशा करते है कि कोई अनुभवी विद्वान् इस विषय पर एक उत्तम ग्रन्थ लिख कर प्रकट करेगा ।

साहूकारी दूकान या बैंक ।

जैसे घी, गुड़, अन्न, वस्त्र आदिका व्यापार होता है, वैसे ही सिक्केका-नक्द

रुपयेका भी व्यापार होता है। नक्द रुपयेका व्यापार करनेवाली दूकानको महाजनी दूकान—साहूकारी दूकान कहते हैं । अँगरेजीमें उसे बैंक कहते हैं । नक्द रुपयेके व्यापारी सेठ-महाजन-बैंकर आदि बहुमान-सूचक नामसे विभूषित किये जाते है ।

व्यापारका शिखर—सारे धंदोंका सिरताज, महाजनी धंदा है । व्यापारकी ऊँचीसे-ऊँची सीढी महाजनी-बैक है । इससे अच्छा, इससे महत्त्ववाला, इससे व्यापक, इससे कठिन और इससे विशेष सन्मानवाला दूसरा कोई धंदा, कोई रोजगार और कोई व्यापार नहीं है । साख, नक्द रुपया और व्यापारका पूरापूरा ज्ञान हो तभी महाजनी-बैकिंग अच्छी तरह चलाई जासकती है, अन्यथा नहीं । बाजारमें बीस-बिसवा साख हो तभी महाजनी रोजगार चल सकता है । इसके सिवाय साहूकारी धंदा करनेवालोंके सब प्रकारके धदे-रोजगारों-से पूरीपूरी वाकफियत (जानकारी) होनी चाहिए। इस जानकारीके बिना कैसे मालूम हो सकता है कि किस धंदेमें कितना लाभ है और कब और कितना रुपया लगाया जा सकता है। अतएव बेंकके मैनेजर और एजंटको —महाजनी दूकानके सेठ, मुनीम और गुमाश्तोंको सभी काम धंदोंकी पूरी पूरी वाकफियत रहनी चाहिए ।

जैसे शरीरमें हृदयका स्थान मुख्य है वैसे ही व्यापार धंदेमें महा-जनी दूकान मुख्य है । महाजनी दूकान या बैक चलानेवालोंको इस बात-के सच्चे ज्ञानकी बड़ी ही आवश्यकता है कि किसकी साख कितनी और कैसी है, द्रव्यशक्ति कितनी है और कौन किस लियाकतका है--इत्या-दि।इस ज्ञानके बिना नक्द रुपयेका लेन -देन हो ही नहीं सकता । इस-के सिवा यह भी जानना चाहिए कि किसकी सम्पत्ति कितनी और किस प्रकारकी है । सिक्केकी ज्यादती कब होगी और कमी कब—संग्रह कब बढेगा और खपती कब, इत्यादि। सिक्के सम्बन्धी सारा ज्ञान भी महा-

जनी धंदा करनेवालेको होना चाहिए। बैंकरको ऐसी कलामें प्रवीणता होनी चाहिए कि अपनी साखपर लोगोंसे बातकी-बातमें पैसा इकट्ठा कर अपने बैंकमें जमा करले। सारे रोजगारोंका जीवन, सारे व्यापारोंका आधार इसी महाजनी पर है। महाजनोंका काम है कि वे रोज व्यापारोंकी नाडी देखकर उनकी चिकित्सा करें। निदान मिलाकर पौष्टिक ओषधि और पथ्यकी व्यवस्था करें। इसी कामके लिए महाजनी-बैंकिंगकी उत्पत्ति हुई है। हमारे देशमें महाजनीका व्यापार बहुत प्राचीन समयसे चला आता है—अब भी चल रहा है। परन्तु बैंक थोड़े समयसे चले हैं। बैंकोंकी अभी बाल्यावस्था है, अँगरेजी राज्यहोनेके बाद इनकी सृष्टि हुई है। * देशी व्यापारी चैंबरके दूसरे व्हाल्यूमके पृष्ठ २९५-९६ का अभिप्राय हम यहाँपर लिखते है।

"सच पूछो तो बैंकर क्रेडिटका—साखका व्यापारी है। वह दुनियाके पाससे अपनी साखके बलसे थोड़े व्याज पर द्रव्य उधार लेता है और लोगोंको अधिक व्याज पर देता है। वह लोगोंको इतने व्याज पर उधार देता है कि उसमेंसे मिहनत, मकानका किराया वगैरह निकाल कर स्वयं कुछ लाभ उठा सके। बैंकरका ध्यान खासकर दो बातों पर अवश्य होना चाहिए। १-डिपाजिट रकमकी सहीसलामती रखना और २-शेअरहोल्डरोंको काफी मुनाफा पहुँचाना। इस कामके लिए उसे विचार रखना चाहिए कि कुछ नक्दी सदा बनी रहे और कुछ रुपया ऐसे निर्भय स्थानोंमें रक्खा जावे कि जहाँसे तुरन्त प्राप्त होसके। जैसे गवर्नमेंट

* इस विषयका विशेष ज्ञान सम्पादन करनेके लिए हमारे मित्र पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदीके बनाये हुए सम्पत्तिशास्त्रका बैंकिंग नामक प्रकरण पढना चाहिए—उस समय तक कि जबतक कोई, अँगरेजी भाषाकी भाँति हिन्दीमें भी बैंकिंग पर महत्त्वपूर्ण ग्रन्थराशि लिखकर या लिखवाकर न प्रकाशित कर दे।

सिक्यूरिटी, डिसकाउंटस लोन वगैरहमें। बैंककी सफलताके लिए मूल आवश्यक बात यह है कि मूलधन बहुत ज्यादा होना चाहिए। इतना ज्यादा कि प्रजाका उसपर विश्वास जम जावे और बहुतसा रुपया जमा हो सके। बेकका यह अत्यन्त आवश्यक कार्य है कि वह लोगोंका खूब रुपया जमा करे। इस समयमे औद्योगिक हलचल और साहसिक व्यापार इतने ऊंचे पाये पर किये जाते है कि खानगी दूकानदार और थोडी पूंजीके बैकोंको सफलता मिलनेका बहुत ही कम मौका मिलता है। इंग्लेंडमें बहुतसे बैक मिलते है–इसका भी यही कारण है।

कई बार मनुष्य अचरज करते है कि एक बैक जब २०) रुपये सैकड़ा व्याज दे सकता है तब दूसरा १५)रुपये सैकड़ा भी नही दे सकता, इसका कारण क्या है? इसका कारण बैकके मूल धन और जमा हुई रकमकी कमी-बेशी है। कल्पना कीजिए कि भवानीगंजमें एक बैंक खोला गया। उसका मूलधन है ४ करोड़ और जमा हुआ रुपया है तीस करोड। इसी तरह दूसरा बैक श्यामपुरमें है जिसका मूलधन ८ करोड़ और जमा तीस करोड रुपया है। ऐसी सूरतमे पहला बैक दूसरे बैकसे दूना व्याज दे सकेगा।

२३ अक्टोबर १९०९ के इकानामिस्टसे जाना जाता है कि ग्रेटब्रिटनके जाइन्ट स्टाक बेकोंमें ९५ करोड़ ५० लाख पौड जमा हुई रकममे थे। पहली दस सालोंसे इस रकममें १५ करोड पौडकी रकम ज्यादा जमा हुई थी। देशके व्यापारकी वृद्धिके लिए इतना धन प्रजाकी ओरसे दिया गया। यदि इस रुपयेसे बेककी सहायता न की जाती तो यह रुपया व्यर्थ पड़ा रहता। बैक अपनी शाखाओंके द्वारा देशके कोने कोनेसे रुपया इकट्ठा करता है और व्यापारी उद्योग धदोंमें लगाता है।

इतनी बड़ी रकम देशके उद्योगधदेको सहायता देनेमे लगाई जाती है-

इसका सारा श्रेय बेंकको ही है । अमुक मूलधन बारबार उद्योग धंदे-की वृद्धिके लिए लगाया जाता है यह भी बैंकका ही सुफल है। संक्षेपसे कहें तो बैकोंके द्वारा सोनेके सिक्केकी भाँति एक सिक्का और निकला है और साखके आधार पर उसका चलन होगया है । बैकोंके सिरपर बड़ी भारी जोखिमका काम रहता है। इसीसे व्यापारी जगतमें बैकोंके मैनेजर-का पद बड़े ही महत्त्वका समझा जाता है । उसका प्रभाव बहुतसे व्यापारी उद्योग धंदोंपर पड़ता है। कई बार तो प्रजाके बहुत बड़े विभाग-की भलाईका आधार बैंकके मैनेजरो पर होता है। बैकका मैनेजर एक अच्छा व्यापारी ही नही, बड़ा ही दूरदर्शी राजनीतिज्ञ भी होना चाहिए, पसेके लैन-दैनका जो काम उसके हाथ में है इस कामको उसे बड़ी ही सावधानीसे करना चाहिए । नुकसान न होने देकर फायदा ही फायदा उठानेके लिए बड़े ही अनुभव, अध्यवसाय और निपुणताकी आवश्य-कता है। मैनेजरमें ये सब गुण होना चाहिए ।

बैकिंगके धंदेके विषयमें सर फीक्स शुस्टरने नीचे लिखी हुई बात कही है--उत्तम और निपुण बेंकिग पर सारे संसारमें फैले हुए हमारे व्यापारका आधार है, इतना ही नहीं वह प्रजाके विश्वासका भी मूल आधार है। बैंकरको एक ही धदा न जानना चाहिए किन्तु देशके सारे काम धंदोका उसे अनुभव होना चाहिए । इतना ही क्यों उसे देश-विदेशके सारे व्यापारी आन्दोलनोंसे वाकफियत, राजकीय विषयोंका ज्ञान, नये नये आविष्कारोकी खबर और कानूनका ज्ञान होना चाहिए। नये कानूनोंका व्यापार पर क्या प्रभाव पड़ेगा यह भी उसके लक्ष्यसे बाहर न होना चाहिए। इसके सिवा संसारकी हलचल तथा मनुष्यस्वभावकी बारीकियोंको जाननेमें भी उसे कुशल होना चाहिए

महाजनी या बेकिंगमें हुंडी-पुरजेका खास तौर पर काम पड़ता है। व्यापारियोंको एक जगहसे दूसरी जगह पर सुरक्षित रीतिसे सिक्का-नाणा-

भेजनेका काम पड़ता है। इस व्यवहारमें सुगमता होनेके लिए हुंडी-पुरजेकी आवश्यकता होती है । उदाहरणके तौर पर हम इंदोर और बम्बईका दृष्टान्त लेवें। इंदोरके व्यापारियोंने बम्बईसे और बम्बईके व्यापारियोंने इंदोरसे पाँच लाखका माल खरीदा । इंदोर वालोंको बम्बईमें रुपये देनें है और बम्बईवालोंको इंदोरमें । ऐसी सूरतमें कोई किसीको नक्द रुपया न भेजेंगे । बम्बईके व्यापारी बम्बईमें विनोदीराम बालचन्दजीके यहाँ रुपया जमा करा कर इंदोरकी हुंडी करावेंगे और उस हुडीके द्वारा इंदोरकी बिनोदीराम बालचन्दजीकी दूकानसे मालवालोंको दाम मिल जावेंगे। इसी तरह इंदोरके व्यापारी नक्द रुपया बम्बई न भेजकर इंदोरके सेठ तिलोकचन्द हुकुमचन्दकी हुडीके द्वारा बम्बईके मालदारोंको चुकवा देंगे। इस तरह जो कोई साहूकारीका धंदा करता है, जिसकी जगह जगह दूकाने है, उनकी हुंडियोंके द्वारा देन-लेनकी भुगतान की जा सकती है। ऐसी हुंडी-पुरजोंको अंगरेजीमें 'चेक' या 'डाफ्ट' कहते है। जिस पत्र या चिट्ठीके द्वारा रुपया मिलता है उसे हुडी कहते है।

हुंडी दो प्रकारकी होती है—एक नामजोग और दूसरी शाहजोग । नामजोग हुंडीके रुपये उसे ही मिलते है जिसका नाम उसमें लिखा होता है। हुंडी लिखनेवाला जिसपर हुडी लिखता है उसके नाम एक पत्र बालाबाला भी भेजता है। उस पत्रमें जिसके नामकी हुंडी सिकारना होती है--जिसे हुडीके रुपये देनेकी लिखी होती है उसकी निशानी वगैरह लिखी होती है। उसे देखकर—उस मनुष्यकी पहचान कर हुंडी सिकारनेवाला उसे रुपया दे देता है। इस तरहकी हुंडी अब इस तरह सिकारी जाने लगी है कि किसी प्रतिष्ठित व्यक्तिकी साक्षीसे यह निश्चय कर लिया जाता है कि अमुक व्यक्ति वही है जिसके नामसे हुंडी सिकार देनेको लिखा है। दूसरी शाहजोग हुंडी होती है—इसके

रुपये किसी प्रतिष्ठित मनुष्यकी साक्षीसे मिल जाते है। शाहजोग हुंडी बाजार भावसे बेच दी जा सकती है, फिर वह कहींकी भी हो और किसीके भी नामकी हो। इससे व्यापारी कारोबारमें बड़ा सुभीता पड़ता है।

हुंडीके रुपये किस समय दिये जावें, इसका लेख हुंडीमें ही लिखा हुआ होता है। इस विचारसे हुंडी दो प्रकारकी होती है—एक, दर्शनी और दूसरी, मुद्दती। दर्शनी हुंडीमें लिखा होता है कि हुंडी देखते ही उसी दिन रुपये देना और मुद्दतीमें 'कार्तिक सुदी १५ से रोज ३१' इत्यादि रूपसे ४–६--८--१५–३० दिन आदिकी मुद्दत लिखी हुई होती है।

हुंडी एक महत्त्वकी दस्तावेज होनेसे उसके लिखनेमें बड़ी सावधानी रक्खी जाती है। रुपयेका केवल अंक ही लिखा हो तो वह आसानीसे पलटा जा सकता है, अतएव सारे आवश्यक कागजोंमें अंकोंसे लिखकर अक्षरोंमें भी रुपये लिखे जाते है। हुंडीमें उस रकमकी आधी संख्या लिख कर उसके दूने पूरे रुपये लिखनेकी रीति है। इसके सिवाय हुंडीके अन्तमें या उसकी पीठ पर दोहरा सतरोंका चौखूंटा कोष्ठक बनाकर उसमें रकमका अंक और उसकी बगलमें अक्षरोंसे इतनेके दूने पूरे रुपये इतने लिखनेकी भी परिपाटी है। कहींपर 'इतनेके चौगुने पूरे रुपये इतने' लिखनेकी भी रीति है। नामजोग हुंडीमें जिसके रुपये रक्खे हों उसका और जिसे रुपये दिलवाने हों उसका भी नाम लिखा जाता है और शाहजोग हुंडीमें 'शहाजोग' या 'शाह व्यापारी जोग' लिखा जाता है। हुंडीके रुपये कोई और न ले जासके, रुपयेकी जोखम माथे न आपडे, इसलिए किसी प्रतिष्ठित व्यक्तिकी जामिन लेकर कि यह वही व्यक्ति है, हुंडीके रुपये सिकारे जाते है। इसी हेतुसे हुंडीमें लिखा जाता है कि 'नाम धामकी चौकसी करके रुपये देना।' अमुक हुंडी लिखीगई है इस बातकी

खातरी होनेके लिए जिसपर हुंडी लिखी होती है उसे हुंडी लिखनेवाला वालावाला पत्र भेजता है।

जिस पत्रमें 'नाम जोग' हुंडी लिखी हो उसमें रुपये लेनेवालेके निशान आदि लिखे होते हैं और 'शाहजोग' हो तो किसकी ओरकी आदि लिखा जाता है। हुंडीमें इस बातका उल्लेख करनेके लिए, निशानी पत्रमें लिखेंगे आदि लिखा जाता है। गुमाश्तेने हुंडी लिखी होती है तो अन्तमें उसके हस्ताक्षर रहते है और सेठ हुंडीके सिरे पर या बगलमें अपनी सही कर लिखते है कि 'इस हुंडीको सिकार कर रुपये देना,' इससे हुंडी सिकारनेवालेकी खातरी होजाती है।

हुंडी खोजाय या फट-फटा जाय तो उसके रुपये मिलनेके लिए हुंडी लिख देनेवाला धनी 'पैठ' लिख देता है, पैठके खराब होने पर 'परपैठ' और परपैठके गुम हो जाने पर 'चिट्ठी'। प्रत्येकमें पिछले लेखोंका उल्लेख रहता है और लिखा रहता है कि अच्छी तरह चौकसी-खातरीकर रुपये देना। इसका मतलब यह होता है कि कहीं कोई एकसे ज्यादा बार रुपये न ले जावे। सकोच या प्रेमके कारण कोई कोई अपने आड़तियाको यह भी लिख देते है कि अमुक व्यक्तिको अमुक रकम तक हुडियावन लिए बिना रुपये देना। इस तरहके लेखको शिफारिश कहते है।

हुंडीके व्यवहारमे आनेवाले कितने ही पारिभाषिक शब्दोका यहाँ पर खुलासा करना आवश्यक है।

दिखाई—जिस पर हुडीकी गई हो उसे हुंडी दिखलाना-उसे रुपये देनेंकी सूचना करना 'दिखाई' है।

हुंडियावन—हुंडी देने या लेनेके मेहनतानेको हुंडियावन या हुंडावन कहते है। हुडियावनके भावका आधार बाजारमे सिक्केकी कमी बेशीपर है। बाजारमे रुपयेकी अधिकता हो तो हुंडीका भाव तेज होता है और

कमी हो तो मन्दा। ९९।।।≈)।।। में भी १००) की हुंडी मिले तो मन्दी कही जाती है और १००) से १०१) तक १००) की हुंडी मिले तो तेजी। यदि १००)में १००)की हुंडी मिले तो बराबरीका भाव कहा जावेगा। नोट लेने और उन्हें बीमा कराकर भेजनेका खर्च या मनीआर्डर द्वारा रुपया भेजनेका खर्च एक रुपया सैकड़े तक होता है और इस तरह रुपया भेजनेमें सुभीता भी है। अतएव हुंडियावनका खर्च एक रुपया, सैकड़े तक होसकता है-विशेष नहीं। इस हुंडियावनके भावकी मन्दी तेजी और बराबरीको अँगरेजीमें डिसकाउंट प्रिमियस और पार कहते है।

सिकारना—यह शब्द स्वीकरणसे निकला है। इसका मतलब यह है कि जिसपर वह हुंडी हुई है उसने उसे मान्य कर ली और उसके रुपये दे दिये।

कच्ची रहना—जबतक हुंडी सिकारनेकी मुद्दत पूरी नही होती तबतक उसे कच्ची हुंडी कहते है।

पकना—रुपये देनेकी मुद्दत पूरी हो जाने पर कहा जाता है कि हुंडी पक गई।

खडी रहना—हुंडी दिखाने पर किसी कारणसे जब वह सिकारी नहीं जाती तो उसके लिए कहा जाता है 'हुंडी खड़ी है।' हुंडी खडी होती है उस समय सिकारनेकी 'नाही' नही की जाती, जवाब नही आया है-खुलासा आनेसे सिकारेंगे, इत्यादि बातें कही जाती है। बम्बईमें इस तरह खडी हुंडी तीन दिन तक रक्खी जा सकती है। इससे ज्यादा खड़ी रक्खी जावे तो बाजारकी दरसे हुंडी सिकारनेवालेको उतने दिनका व्याज देना पडता है। बैंकोंके चेक ड्राफ़्ट वगैरह इस तरह खड़े नही रह सकते, दिखाते ही उनके रुपये देने पड़ते है।

रखनेवाला—जिसके पाससे रुपया जमा कर हुंडी लिखी गई हो उस धनीको रखनेवाला कहते है।

खोखा—सिकार कर भरपाई किये हुए हुण्डीके कागजको खोखा कहते है।

नकरामन-सिकरामन—जिस आसामी पर हुंडी लिखी गई है यदि वह आसामी हुडी को न सिकारे और वापस लौटा दे तो उस हुंडीके लिखनेवाले आसामीको व्याजसहित उस हुंडीके रुपये पहुँचाने पड़ते हैं। इन रुपयोंके पहुँचानेमें उसे जो खर्च देना पड़ता है उसीका नाम "नकरामन–सिकरामन" है, या यों कहिए हुडी पीछी फेरनेका दंड है। नकरामन–सिकरामनका खर्च एक रुपया सैकड़ेसे सात रुपया सैकड़े तक होता है। इसका सर्वत्र समान नियम नही होता, अलग-अलग जगहों पर अलग-अलग होता है।

नामा–बही खाता।

अपने आय-व्यय–जमाखर्चके हिसाबको लिखा हुआ रखना नामा कहलाता है। हमने किसको, कितनी रकम, कब और क्यों दी, हम कब, किसके यहाँसे कितनी रकम क्यों लाये, इस बातकी याददास्त रखने के लिए व्यापारीको लिख रखना पड़ता है। इस लिख रखने-की पद्धतिको ही नामा कहते है। हमारी आमदनी कितनी है, खर्च-कितना है और हमारे पास पूँजी कितनी है, या यों कहिए कि आया क्या, उठा क्या और रोशन बाकी कितनी है इस बातके ज्ञानका साधन नामा है। व्यापारमें नामा अर्थात् जमाखर्चका हिसाब रखना बहुत आवश्यक और उपयोगी है। जिस व्यापारीका नामा ठीक नही है उसके व्यापार-व्यव-हारमें घोटाला होगा ही होगा। व्यापारमें जो व्यापारी नुकसान उठाते हैं, उनमें सौमेंसे अस्सी ऐसे होते हैं कि जिनका नामा अपूर्ण और गड़बड़ होता है। जिसका नामा साफ नहीं होता उसके व्यापारमें घोटाला ही

होता है। जो नामेको साफ और स्वच्छ नहीं रख सकता उसे व्यापार करनेका शऊर ही नही है। जो हिसाब किताब रखना नहीं जानता उसमें व्यापार करनेके 'लख्खन' ही नही आवेंगे। नामेकी पूरीपूरी जानकारी बिना व्यापारका प्रारम्भ ही करना ठीक नही है। इतना लिख कर भी हम नामेके उस महत्त्वको अच्छी तरह नहीं बतला सके, कि वास्तवमें जितना उसका व्यापारमें महत्त्व है।

नामा एक स्वतन्त्र शास्त्र है। नामेकी उत्तम जानकारी एक विद्या है। नामेका ज्ञान एक उपयोगी कला है। प्रत्येक व्यवसायीको उसकी आवश्यकता है। इसके बिना किसीका व्यापार-व्यवसाय चल नही सकता। नामाके लिए जो बहियें रखनी पडती है उनमें नित्यबही और खाता मुख्य है। अपने यहाँ आई हुई अर्थात जमाकी हुई रकम धनीके नामसे बाई ओर जमा की जाती है। इसी तरह दी हुई रकम दाहिनी ओर लिखी जाती है। प्रतिदिनका नक्द या उधारसे किया हुआ लेन-देन नित्य बहीमें लिखा जाता है। सायंकालको जब लेन-देन बंद कर किया जाता है तब जमा खर्चका जोड़ लगा और रोशन बाकी निकालकर मिती बंद कर दी जाती है। चतुर व्यापारी प्रतिदिन रोशन (बचत) मिलाये बिना नही रहता।

नित्य बहीकी रकम नाम-वार और जिनसवार एक ही जगह मिल जावे इसके लिए एक दूसरी बही रक्खी जाती है इसमें धनी-वार खाते होते हैं। इसमें नित्य-रोकडबहीका पाना नंबर और मिती लिखकर धनीवार लेन-देनकी बिगत एक ही जगह लिखी रहती है। इसे खाता कहते है। जमा खर्चका मुख्य कागज नित्यबही-रोकड़ है और उसका वर्गीकरण-(इकट्ठा किया हुआ) तथा वर्गीकरणकी अनुक्रमणिका खाता बही है। खाता-बहीके देखनेसे तुरंत इस बातका पता लगाया जा सकता है कि सारा लेन-देन कितना है और

हानि-लाभ क्या है, इत्यादि। चतुर व्यापारी जैसे रोज रोशन मिला लेते है वैसे ही प्रतिवर्ष अपने हानिलाभका भी हिसाब कर लिया करते है। बरसों तक हिसाब-किताबको न देखनेवाले व्यापारीको बहुधा अन्तमें दिवाला निकालने या दूकान बन्द करनेका समय आ जाता है।

नित्यबही और खातेके सिवाय बड़े बड़े व्यापारियोंके यहाँ, नोंधबही, अङ्कबही, व्याजबही आदि अनेक बहियाँ होती है। परन्तु वे सब इन दो मुख्य बहियोंके ही अंश है। इस बातका विशेष विवेचन करनेकी आवश्यकता नही है। यहाँ संक्षेपमें इतना ही कहना है कि व्यापार करनेवालोंको नामाके ज्ञानकी, उसकी पद्धतिकी और उससे होनेवाले परिणामकी जानकारी होना बहुत जरूरी है। नामा एक स्वतत्रशास्त्र है और इसका स्वतत्ररीतिसे अभ्यास करना चाहिए। इस शास्त्रके सीखनेका सरल और सीधा एक ही मार्ग है कि नामा स्वय लिखे।

ग्राहक और खरीददार।

पाठशालामें जैसे अध्यापकके लिए विद्यार्थी होते है, रणभूमिमें सेनापतिके लिए जैसे सिपाही होते है और साम्राज्यमें चक्रवर्तीके लिए जैसे प्रजाजन होते है वैसे ही व्यापारमें व्यापारीके लिए ग्राहक होते है। व्यापारी स्वय एक प्रकारका ग्राहक होता है और उसे ग्राहकोंकी आवश्यकता भी होती है। पहले हम बतला चुके हैं कि सस्ताईमें खरीदना और मँहगाईमें बेचना व्यापारीका काम है। व्यापारीको जैसे खरीदनेकी जरूरत पड़ती है वैसे ही बेचनेकी भी जरूरत पड़ती है। सास एक समय बहू भी होती है और बहू भी सास बनती है। सांसारिक व्यवहारका यह नियम व्यापारीके लिए भी लागू होता है। सामान्य रीतिसे माल खरीदनेवालेको ग्राहक कहते है, परन्तु यहाँ पर

हम ग्राहकका कुछ विश्लेषण किया चाहते है। ग्राहक वह है जो अपने उपयोगके लिए माल खरीदे और जो शख्श अपने उपयोगके लिए नहीं, बेचकर लाभ उठानेके लिए माल खरीदे वह व्यवसायी है।

ग्राहक-व्यवसायी और दूकानदार-आड़तियोंका परस्परमें बहुत ही निकटका सम्बन्ध है। पहले ग्राहकी बाँधना—उसे कायम रखना यह व्यापारका मुख्य काम है। इस कामके लिए आपसमें विश्वास बँध जाना चाहिए। विश्वास बँधनेका संपूर्ण आधार परस्परके बर्ताव और शुद्ध व्यवहार पर निर्भर है। व्यापारीको चाहिए कि वह ग्राहकोंके साथ अपना व्यवहार सदा विश्वासपूर्ण रक्खे। नामा साफ और शुद्ध रखना चाहिए। दूकानदार या आडतियाके लिए इतना ही काफी नहीं है कि वह नामेको ही ठीक रक्खे, किन्तु उसके लिए यह भी आवश्यक है कि वह व्यवसायीको अच्छा-से-अच्छा माल सस्ते भावसे खरीद देनेकी सावधानी रक्खे। ग्राहकको किसी तरहका नुकसान न होने पावे, इस बातकी खबरदारी रखना एक आवश्यक कर्तव्य है। नामा ठीक रखना, ग्राहकको सस्ता और अच्छा माल मिले, उसे हानि न हो और लाभ रहे, इत्यादि बातोंकी व्यवस्था रखना और इसी तरहकी इच्छा रखना व्यापारीका काम है। व्यापारीको सफाई, नियमितता, स्वच्छ व्यवहार, स्पष्टवादिता और सरलता पर खास तौरपर ध्यान रखना चाहिए।

व्यापारमें आड़तके धंदेके सिवाय एक दलाली धंदा भी है। खरीदनेवाले और बेचनेवालोंके सौदेको करा देनेवालेको दलाल कहते है। आड़त भी एक प्रकारकी दलाली है, परन्तु है वह दलालीकी अपेक्षा मानपूर्ण। आड़तके धंदेवालोंको दूकान भी रखनी पड़ती है और कामके प्रमाणमें पूँजी रोकनी पड़ती है। दलालीमें इसकी कोई आवश्यकता नही है। दलाल बिना एक टकेकी पूँजीके चल फिर कर अपना धंदा करता है। आड़तका धंदा मुनीम गुमाश्ता आदि रखकर

भी चलाया जाता है; परन्तु दलाल तो स्वयं गुमाश्ता और स्वयं ही सेठ होता है । आढ़तमें और दलालीमें यही भेद है ।

व्यापारीका काम हम ऊपर बता चुके है कि वह सब तरहसे ग्राहक-का विश्वासपात्र बना रहे । इस कामके लिए ऐसे नियम जो साधारणतः सबको लागू हों—बतलाना कठिन है और बतलाने भी बैठें तो वे पूरे न होंगे । एक ग्राहक होकर कितने समय तक वह कायम रहता है, इसी पर दूकानदारकी कीमत होती है--इसी पर उसकी उत्तमता, उसकी सच्चाई जानी जाती है । एक समय बँधी हुई ग्राहकी कायम बनी रहे इसीमें दूकानदार और ग्राहक दोनोकी भलाई तथा शोभा है । जैसे नौकरोंके स्थिर न रहनेमें मालिकका और घरके मजबूत न बँधनेमें कारीगरका दोष समझा जाता है, वैसे ही ग्राहकके कायम न रहनेमें दूकानदार--या आढ़तियाका दोष माना जाता है, क्योंकि यह नियम है कि कोई व्यवसायी, कोई ग्राहक उस समय तक दूसरे आढ़तिये या दूकानदारके यहाँ--अपने पुराने ठिकानेको छोड़कर नहीं जाता जबतक उसके लाभमें हानि नही पहुँचती । अतएव दूकानदार या आढतियेको सदा ध्यान रखना चाहिए कि वह अपने पुराने ग्राहकोंको न टूटने देवे । दूकानदार या आढ़तियेकी इज्जत इसीमे है कि उसके यहाँ पुराने-से-पुराने ग्राहकोंका लेन देन बना रहे । इतना ही नही वरन् उसमें वृद्धि भी होती जावे । ऐसा ही व्यवहार व्यवसायी और ग्राहकका होना चाहिए । गरज यह है कि व्यापारके छोटे-बड़े सभी धंदोंमें इसी नियमका पालन होना चाहिए ।

विज्ञापन।

व्यापारीकी जितनी प्रसिद्धि होगी उतना ही उसे लाभ होगा। हमारे यहाँ अमुक अमुक माल मिलता है और हमारी दूकान अमुक स्थान पर है इत्यादि बातोंकी जितनी ज्यादा प्रसिद्धि होगी उतना ही अधिक लाभ होगा। प्रसिद्धि पर ही ग्राहकोंकी बढती और मालकी खपती होती है। इस बातमें किसी प्रकारका संदेह नहीं है कि व्यापारकी सर्वत्र जितनी ज्यादा प्रसिद्धि की जावेगी-उतना ही अधिक लाभ होगा। प्रसिद्धि करना व्यापारमे पहला और आवश्यक काम है। व्यापारीको इस बातका ज्ञान होना ही चाहिए कि वह अपनी प्रसिद्धिकी अच्छीसे-अच्छी तरकीबें सोचकर काममें लासके। सुखसंचारक कंपनी मथुराका सुधासिन्धु, डा० एस के. वर्मनका अर्ककपूर, डोंगरेका बालामृत, ठाकुरदत्तशर्मा लाहोरकी अमृतधारा, मणिशंकर गोविन्दजी-की आतङ्कनिग्रह गोलियाँ और इसी तरह अन्यान्य व्यापारियोंकी वे वे चीजें जो खूब बिक रहीं है इसका कारण क्या है? यही कि उन्होंने विज्ञापनोकी धूम मचा रक्खी है-अपनी प्रसिद्धि खूब फैलाई है। अपनी, अपने मालकी और अपनी दूकानकी योग्य प्रसिद्धि करना यह एक प्रकारकी कठिन कला है। अपनी ओर लोगोंके चित्तका आकर्षण करना, उन्हें अपना ग्राहक बनाना और उन पर अपनी साख बिठलाना ये तीनों काम विज्ञापनके द्वारा सिद्ध करने पड़ते है। इस लिए व्यापारीको विज्ञापन-कलाका ज्ञान होना चाहिए। जो व्यापारी प्रसिद्ध न हुआ हो, जिस व्यापारीके मालकी बहुतेरे मनुष्योंको खबर न हो और जिस व्यापारीकी दूकानके पतेकी लोगोंको खबर न हो, उस व्यापारीको विशेष लाभ नहीं हो सकता। इस वास्ते समझदार व्यापारीका ध्यान सबसे पहले इस बातकी ओर झुकता है कि वह

अपने माल और दूकानको खूब प्रसिद्धिमें लावे। विज्ञापन व्यापारमें मुख्य नहीं, परन्तु प्रथम कर्तव्य अवश्य है। दूकान, आड़त, उद्योग और व्यापार धंदेके प्रारम्भ करनेके साथ ही उसे प्रसिद्ध करनेकी आवश्यकता है। दूकान खोल दी, माल भर लिया, नौकर-चाकर, गुमाश्ते-मुनीम सब रखलिए, परन्तु जब तक लोगोंमें प्रसिद्धि न होगी तब तक ग्राहक आवेंगे किस तरह? अतएव व्यापारीको प्रसिद्धिके लिए तन मन धनसे प्रयत्न-शील रहना चाहिए।

अपने नामकी, दूकानकी और मालकी प्रसिद्धि करनेके रीति-रिवाज अलग-अलग देशोंमें अलग-अलग होते है। दूकान खोलते समय पानसुपारीके लिए बड़े बड़े आदमियोंको बुलानेकी रीति हम लोगोंमे प्रचलित है। पश्चिमीय लोगोके ससर्गसे अब यह भी रीति चल पड़ी है कि किसी बडे मनुष्यके हाथसे कलकारखाने दूकान आदि खुलवाई जाती है और इस उत्सवके प्रसगमे बहुतसे मनुष्य निमन्त्रित किये जाते है। यह परिपाटी यद्यपि धूमधामवाली है परन्तु व्यापारकी प्रसिद्धिके लिए है बडे ही महत्त्वकी। क्योंकि ऐसे उत्सवोंमें व्याख्यान वगैरह होते है और उनसे व्यापारकी चर्चा और दूकानकी प्रसिद्धि होती है। हमारे व्यापारी अपनी जान-पहचानवालोंको चिट्ठीपत्री भेज कर दूकान-दारीकी खबर देते है और यूरोपमें इससे कुछ विशेष भी किया जाता है। पढनेवालोंका ध्यान आकृष्ट हो, इस तरह समाचारपत्रोंमें विज्ञापन देते है, और करपत्र-हेंडबिल बाँटते है। अभी अभी इस नये समयमें हमारे यहाँ भी ऐसी ऐसी रीतियोंका प्रचार हो चला है। परन्तु पश्चिमकी तुलनामें वह न-कुछके बराबर है। जब हम पियर्सन सोप आदिके पश्चिमीय विज्ञापनोंकी व्यापकता और अपने यहाँके विज्ञापनोंकी अल्पताका विचार करते है, तब उक्त अनुमान ही करना पड़ता है। हमारे व्यापारी अभी तक पोस्ट, प्रेस और समाचारपत्रोंसे जैसा चाहिए वैसा लाभ

नही उठा सके। कई लोगोंका विचार यह भी है कि इस तरह प्रसिद्धि होनेकी अपेक्षा स्वाभाविक रीतिसे प्रसिद्धि होनी ठीक है। सारे संसारके साथ व्यापार करनेका सुभीता होने पर भी हमारे व्यापारी इस प्रसिद्धिके कार्यमें शिथिल रहें यह बात इस समयमें आश्चर्यसे खाली नही हो सकती। जगतके सारे व्यापारोंमें यूरोपियन व्यापारी बहुत बढ़े चढ़े है और उनकी व्यापार-पद्धति भी बहुतसे अंशोंमें पूर्णताको पहुँच गई है। उनकी व्यापार-पद्धतिका हमें अनुकरण करना चाहिए। हमारे देशी व्यापारियोंको सम्भव है इस बातका विश्वास भी न हो कि यूरोपका एक-एक व्यापारी विज्ञापन देनेमें ही करोड़-करोड़ रुपया खर्च कर देता है। लाख-लाख रुपया प्रतिवर्ष विज्ञापन देनेमें खर्च करनेवाले तो वहाँ पर सैकड़ो है। अमेरिकाके सारे व्यापारी सालभरमें आठ-नौ करोड़ रुपया विज्ञापनोंमे खर्च करते है।

समाचारपत्रोंमे विज्ञापन देना तो अब सीधा मार्ग समझा जाने लगा है। अँगरेज व्यापारी अँगरेजी पत्रोमे सदाके लिए विज्ञापन देते है। व्यापारियोंके विज्ञापनोंके आधार पर ही बड़े बड़े दैनिक पत्र चलते है। विज्ञापन देनेसे व्यापारीको प्रसिद्धिका लाभ तो होता ही है, परन्तु उसके साथ ही लोकमतको उच्च करने और विद्याप्रसार होनेका भी किसी अंशमें पुण्य हुए बिना नही रहता। हमारे देशके समाचारपत्रोंकी अभी बाल्यावस्था है। इन्हें सहायता देना और इनके द्वारा लाभ उठाना व्यापारियोंका काम है। कितने ही पुराने और पुरानेपनके ही कारण अपनेको उत्तम समझनेवाले व्यापारी प्रसिद्धिकी इस रीतिको ठीक नहीं समझते। उनका कहना यह है कि इस रीतिमें अपनी प्रशंसाकी बिगुल अपने आप बजानी होती है, अपने मुँह मियाँमिट्ठू बनना कोई बड़प्पनकी बात नहीं है। उनका यह विचार बिल्कुल सोलह आने झूठा नहीं है, परन्तु इस बातको भूल न जाना चाहिए कि समयका परिवर्तन हो गया

हे-स्पर्धाका जमाना चल रहा है । इस जमानेमें ऐसे उपायोंके अवलम्बन किये बिना देश देशान्तरके व्यापारियोंकी प्रतियोगितामें खड़े रहना असम्भव है ।

हमारे देशमें ऐसे अनेक साप्ताहिक पत्र है जिनकी हजारों प्रतियॉ छपती है और एक एक प्रतिको ५-७ आदमी पढ़ते हैं, अतः इनके द्वारा हजारों मनुष्योंको अपनी दूकान और चीज-वस्तुसे वाकिफ किया जा सकता है । यद्यपि इस बातका प्रत्यक्ष फल तुरंत ही हुआ नही देख पड़ता, परन्तु अन्तमें इसका सुपरिणाम हुए बिना नही रह सकता । इसमें सन्देह नही कि समाचारपत्रादिमें विज्ञापन देनेका काम खर्चका है और इसमें यह बात विचार करनेकी है कि खर्चका पलटा निकल आनेकी सूरत है या नही । परन्तु यह बात भी ध्यानसे बाहर नही जाना चाहिए कि पूँजीका व्याज, मकानका किराया, नौकर-चाकरोंका खर्च जैसे माल पर लगाया जाता है वैसे ही विज्ञापनका खर्च भी माल पर ही लगा सकते है ।

प्रसिद्धिका एक यह भी मार्ग है कि अपनी दूकानके मालकी नामावली मूल्य सहित छापी जावें और मुफ्त बॉटी जावें, अर्थात् सूचीपत्र छाप-छापकर जहॉ-तहॉ भेजे जावे । इस मार्गका अवलम्बन आजकालके बहुतसे नये व्यापारी करने लगे है । अपनी दूकानसे बिकनेवाले मालपर अपनी मुहर लगा देना यह भी प्रसिद्धिका एक मार्ग है । अपने नामकी मुहर या लेबिल-चिट लगा देनेसे प्रसिद्धिका काम तो होता ही है, परन्तु उसके साथ ही उस माल पर ग्राहकोंका विश्वास भी जम जाता है। कोई व्यापारी हलके मालपर अपनी मुहर नही लगावेगा । (जो ऐसी मूर्खता करेगा वह अपनी बदनामी कर बैठेगा ।) इसीसे ग्राहक जहॉतक होता है प्रसिद्ध व्यापारीकी मुहरवाला माल लेना पसन्द करते है । यह बात अनुभव सिद्ध है कि लोग भरोसेबन्द मालको लेना ही विशेष पसन्द करते हैं । प्रसिद्धि करनेका एक यह

भी साधन है कि जो पत्र हम लिखते हों, उनके कागजोंके आसपास बड़ी सफाईके साथ अपनी दूकानका ठिकाना और उसमें मिलनेवाली कुछ वस्तुओंके नाम-कीमत आदि छपवाकर रक्खें। इस तरहका पत्र-व्यवहार, वर्तमान पत्रोंके विज्ञापन, मालपर मुहर लगाना, केलन्डर आदि छपवाना, आदि सारे प्रसिद्धि पानेके साधन है। इन साधनोंका जितना हो सके व्यापारीको उपयोग करना चाहिए। नवीनताके कारणसे ये उपाय किसीको आश्चर्यकारी और खर्चवाले जान पड़ेंगे, परन्तु धीरे धीरे आदत पड़ जानेसे सबको पसन्द पड़ेंगे और लाभकारक निकलेंगे। ऐसा किये बिना अब गति नहीं है।

साँझेका व्यापार।

यदि किसीके पास पूँजी न हो, यदि हो भी पर पूरी न हो, या वह अकेले काम न चला सकता हो तो ऐसी सूरतमें किसी दूसरेकी पूँजी, या मेहनत—मुनाफेका कुछ विभाग (हिस्सा) देनेकी प्रतिज्ञासे—व्यापारमें लगाई जावे तब उस व्यापारको साँझेका व्यापार कहते है। साँझेसे व्यापार करनेकी पद्धति ठीक है या नही, इस विषयमें हमारे देशमें बडा ही मतभेद है। हम लोगोंमें अब भी कितने ही मनुष्य ऐसी सलाह देनेवाले मौजूद है जो कहते है कि कुछ भी हो जाय साँझेका व्यापार नही करना चाहिए। परन्तु यह बात समझ रखना अत्यन्त आवश्यक है कि थोड़ी थोड़ी पूँजी और श्रमसे अलग व्यापार करनेकी अपेक्षा साँझेका (सम्मिलित) व्यापार करना बहुत अच्छा है। व्यापार सीखनेवालेके लिए तो साँझेका व्यापार बहुत ही आवश्यक है। इस बातमे किसीका मतभेद नही हो सकता। साँझेके व्यापारियोंकी भी हममें कमी नही है। सातसे ज्यादा साँझेदार मिलकर जब किसी व्यापारको करते हैं

तब उस व्यापारकी परिपाटीको सम्भूय-समुत्थान कहते हैं । अंगरेजीमें ओइन्ट स्टाक कंपनी इसीका नाम है । आजकलके कानूनके अनुसार ऐसी कंपनीकी सरकारमें रजिस्ट्री कराई जाती है । इस पद्धतिसे हमारे देशमें बड़े बड़े कारखाने, बेंक, दूकानें, वगैरह चल रहे है । ऐसी सम्भूय-समुत्थानकी कंपनियोंको रजिस्टर्ड करने और उन पर देखरेख रखनेके लिए सरकारने एक स्वतन्त्र महकमा कायम किया है ।

हमारे देशकी अविभक्त-कुटुम्ब-पद्धतिके कारण, खानगी रीतिसे–सरकारमें रजिस्टर्ड कराये बिना–सम्भूयसमुत्थान पद्धतिसे व्यापार करनेमें कितनी ही जोखिम है । क्योंकि अविभक्त-कुटुम्बके मनुष्योंकी सारी जिम्मेवारीका भार कानूनके अनुसार हिस्सेदार पर आपडता है और उसे अनेक कष्ट भोगने पडते है । अतएव ऐसे पुरुषको हिस्सेदार करनेके पहले और और बातोंके साथ कुटुम्बसम्बन्धी जवाबदारियोंका भी विचार कर लेना चाहिए ।

हिस्सेदारोंके साथ हिलमिलकर काम करनेवाला और समय पर निभा लेनेवाला मनुष्य बडा उपयोगी होता है । अभिमानी और थोड़ी-सी बातको भी भयंकररूप देनेवाला मनुष्य हिस्सेदार हो जाय, तो बड़ा त्रासदायक हो पड़ता है । किसी बातमें मतभेद हो तो उसे परस्परमें स्नेहके साथ ठीक कर लेना चाहिए--बातको न बढने देना चाहिए । हिस्सेदारोंमें ऐसे स्वभावका होना आवश्यक है । किसी हिस्सेदारको, बिना मेहनत किये लाभ उठानेकी आकांक्षा, साँझेके व्यापारमें न रखना चाहिए । साँझेके व्यापारमें हलकापन, तुच्छ दृष्टि वृथा अभिमान, चिढ़ाचिढ़ापन, हठ और झगडालूपन बिल्कुल ठीक नहीं है । धंदा और उसके सम्बन्धकी बात बालकोंके साथ, स्त्रियोंके साथ और अन्यान्य सम्बन्धियोंके साथ करनेकी आवश्यकता नहीं है । हिस्सेवालोंमें प्राय. आचार--विचार, रहन--सहन, चाल--चलन, विद्या–

विवेक, आदि जहाँ तक हो सके समान हो तो अच्छा होता है। विद्यामें, ज्ञानमें और योग्यतामें साँझीदार समान न हो तो साँझा बहुत समय तक नहीं चलता। ऊँच-नीच, उत्तम-अधम, समझदार-मूर्ख, उद्योगी-आलसी, धनवान-गरीब, इस प्रकारका भेद हिस्सेदारोंमें न रहना चाहिए। हिस्सेदारोंका स्वभाव आपसमें समानता रखनेका होना चाहिए। साँझेमें सामाजिक और साम्पत्तिक साम्य रहना चाहिए और हिस्सेदारोंका परस्परमे आदर तथा विश्वास होना चाहिए। ऊपर कही हुई बातोंमेंसे किसी प्रकारकी असमानता हो तो साँझा करनेके पहले ही उसका विचार कर लेना चाहिए। कल्पना कीजिए कि राम-कुमार धनवान् है और कृष्णदास व्यापार-तत्त्वका जाननेवाला है। दोनों साँझेमें व्यापार करने लगे। एकके पैसा है और दूसरेका बुद्धिबल, दोनोंको आपसमें साम्यभाव रखकर काम करना चाहिए। दोनोंको चाहिए कि एक दूसरेको *अपनेसे हीन न समझे। साँझियोंकी योग्यताका निर्णय* पहलेसे ही कर लेनेसे असाम्यभाव कभी उदय नहीं होता। परन्तु यह काम सहज नहीं है क्योंकि साँझीदार जुदी जुदी प्रकृति और जुदे जुदे ढंगके होते हैं।

सम्भूय-समुत्थानकी पद्धतिसे होनेवाले व्यापारके नियम सरकारने बना रक्खे है। इस पद्धतिसे व्यापार करनेका प्रचार हमारे देशमें दिन दिन बढता जाता है। ऐसा होना इष्ट और देशके लिए अत्यन्त आवश्यक है। प्राचीन परिपाटीसे व्यापार करनेवालोंको इस पद्धतिसे व्यापार करनेमें झुँझलाहट मालूम होती है और उन्हें बहुत करके इस प्रणाली पर विश्वास भी नहीं है। इस प्रणालीमें केवल यही बात नहीं है कि बहुतसे मनुष्योंको प्रायः नई बात अच्छी नहीं जान पडती है, किन्तु इस प्रणालीके सम्बन्धमें कहा जाता है कि अपनी चली आई हुई प्रणालीको बदलकर दूसरी क्यों चलाना चाहिए? एक बात और है-हमारे व्यापारियोंको यह बात पसन्द नहीं पड़ती कि उनके कारोबार पर सरकारी देखरेख

रहे, हरएक पूछताछ करनेवाला हो, दूसरोंपर आधार रखना पड़े, दस-बीस मनुष्योंकी मालिकी हो और कानून-कायदोंमें बँधे रहना पडे। मालूम होता है हमारे व्यापारियोंको यह अच्छा नही जान पड़ता कि उनका एकाधिपत्य न चले या उनकी कार्यवाहीको कोई सरकार देखे। सब मिलकर बड़े बड़े उद्योग धंदे न कर हमारे व्यापारी छोटे छोटे धंदे करते है—अपनी अपनी डफली अपना-अपना राग अलापते है। परन्तु यह बात याद रखना चाहिए कि वही पुरानी चाल आजकलके जमानेमें लाभदायक नही हो सकती। यह कौन नहीं जानता कि व्यापारमे बढ़े हुए देशोंके व्यापारियोंने हमें बिल्कुल दबा दिया है, हमारे खाने-पीने, पहरने और व्यवहारमे आनेकी प्राय: सभी वस्तुये हमे विदेशसे लेनी पडती है। हमारे बाजार विदेशी चीजोंसे भरे पड़े है। हम एक तरहसे स्वतन्त्रता-प्रिय ब्रिटिश-साम्राज्यके स्वतन्त्र नागरिक होनेपर भी विदेशी व्यापारियोंके गुलाम हो गये हैं—परमुखापेक्षी हो गये हे। विदेशी व्यापारियोंकी इस शस्त्रहीन विजयके कारणोंमे एक अन्यतम कारण सम्भूय समुत्थान पद्धतिसे बड़ी बड़ी कोषबलवाली कपनियोंका स्थापित होना भी है। इस गुलामीसे छूटनेका—स्वतन्त्र होनेका—ससारमें अपने आपको आत्मावलम्बी सङ्घ सिद्ध कर दिखलानेका एकमात्र उपाय यह है कि सम्भूय-समुत्थानकी पद्धतिसे हमारे व्यापारी खूब मूलधन इकट्ठा कर कल-कारखानोंको चलावे और सफलता पाते हुए देशके मानकी रक्षा करें। हर्षकी बात है कि अभी अभी हमारे देशमें इस पद्धतिसे जीन, मिल, पुतलीघर, बैक वगैरह खुले है; परन्तु इस पद्धतिको हमें बड़े उत्साहके साथ इस दर्जेतक बढ़ाना चाहिए कि हम विदेशियोंके आक्रमणसे अपने आपको बचा सके और प्रतियोगितामे अचलभावसे स्थिर हो सकें, इतना ही क्यों, हो सके तो उन पर अपनी प्रभुता चलावे। ऐसा भारी काम बिना सम्भूय-समुत्थानपद्धतिके—अकेले हाथरोजगार

धंदा करनेसे नही हो सकता । ऐसे महत्त्वके काम करनेके लिए सम्भूय-समुत्थान-पद्धतिका जितना जियादा और जितना जल्दी हमारे देशमें प्रसार हो, करना चाहिए । इस पर हमारा जीवन-मरण निर्भर है । समयको न खोकर हमें इस पद्धतिको सबल करनेका पूर्ण यत्न करना चाहिए । *

व्यापारीके गुण-स्वभाव ।

व्यापारीमे कितने ही गुण होना चाहिए । उन गुणोंमेंसे हम (१) उद्योग (२) उत्साह (३) पक्का विचार (४) कार्यतत्परता (५) धंदेका ज्ञान (६) मनुष्यकी परख (७) पूरी जानकारी (८) बोलनेकी चतुराई (९) सभ्यता और (१०) स्वावलम्बन इन दस मुख्य गुणोंका थोडा थोडा विवेचन इसी अध्यायमें करेंगे । इससे समझमें आजायगा कि धंदेवालेको किन किन गुणोंकी आवश्यकता है ।

(१) **उद्योग**-किसी भी काम-धंदेमें सफलता पाना हो तो मनुष्यको चाहिए कि वह उस कामधंदेमे सदा उद्योगशील रहे; आलस्य और लापरवाही न करे । बहुतसे मनुष्य ऐसे होते है कि थोडी देरतक तो बिजलीकी भाँति काम करते है और फिर सुस्त होकर पड़े रहते है । ऐसे मनुष्योंके हाथसे बहुत करके काम पूरे नही होने पाते । निरंतर श्रम करनेवालोंको ही सफलता प्राप्ति होती है । धंदेवाले मनुष्योंको,-ऐश-आराम, अमन-चैन, मौज-शौक, बार-त्योहार और छुट्टी वगैरहका विचार भी नहीं आना चाहिए । सर्वदा उद्योग, काम और प्रयत्न करना

* पंडित माधवराव सप्रेने इस पद्धति पर एक अच्छा लेख लिखा है जिसका उल्लेख पंडित महावीरप्रसादजी द्विवेदीने अपने सम्पत्तिशास्त्रमें किया है ।

ही सम्पत्ति पानेका साधन है—बड़े होनेका पाया है । आजका समय उद्योगका है—उद्योगके लिए है । जिसे काम न करना हो—जो शरीर, इन्द्रियों और बुद्धिका उपयोग करना न चाहता हो उसे चाहिए कि वह ससारको छोड़कर एकान्तमें जा बैठे और धन तथा मानको पानेके लिए प्रयत्न करनेवालोंको चुपचाप देखता रहे । धंदेमे लगनेवाले मनुष्योंको सदा उद्योगी रहना चाहिए । यही उनके लिए पहिली शिक्षा है । उद्योगसे और सारी बाते सिद्ध की जा सकती हैं । उद्योगी पुरुषका ही प्रभाव कामधंदेवालों पर पड़ सकता है, निकम्मे-अनुद्योगियोंका नही । अतएव आवश्यक है कि सबसे पहिले उद्योगी होना-सीखना चाहिए ।

(२) **उत्साह**—जिस काम-धदेको मनुष्य करता है उसमें खूब मन लगानेको--उस कामकी धुन लग जानेको उत्साह कहते है । मनुष्यमें एक प्रकारका बल होना चाहिए—एक प्रकारकी शक्ति होना चाहिए जिससे कि वह काम कर सके । इस काम करनेवाली शक्तिको अँगरेजीमें ‘ एनर्जी ’ कहते है । उत्साह और कार्यशक्ति इन दो शब्दोंसे एनर्जीका अर्थ स्पष्ट हो जाता है । मनुष्यमें कार्यशक्ति और उत्साह इन दोनों बातोकी आवश्यकता है । केवल उद्योगीपनेसे ही काम नहीं चलता, कार्य-शक्ति और उत्साह भी होने चाहिए । इन तीनोंके योगसे काम सिद्ध होता है—कारोबार बढ़ता है । यह बढ़ती सबके ध्यानको अपनी ओर खीच लेती है । इससे यह आवश्यक है कि धदेवाले मनुष्यमें कार्यशक्ति, उत्साह और अपने धंदोंको बढ़ानेकी पूरी पूरी आकांक्षा हो ।

(३) **पक्का विचार**—उत्साहसे चलाये हुए उद्योगको पक्के विचार-की आवश्यकता है । कैसे ही बड़े उत्साहके साथ काम प्रारम्भ क्यों न किये जावें पर यदि पक्केविचार—दृढ़ निश्चयकी कमी हो तो उन कामोंमें कदापि सफलता प्राप्त नहीं हो सकती है । विचारकी दृढ़ता सिद्धि पानेका—सफलता लाभ करनेका एक मुख्य साधन है । उद्योग

करे और उसके करनेमे उत्साहकी भी कमी न हो तो भी विचारकी परिपक्वता और ठीक ठीक निर्णय करनेके ज्ञानके बिना उद्योग और उत्साह कार्यकारी नही हो सकते । गोली बारूद तैयार हो, बन्दूक भरी हुई हो, परन्तु निशानेबाजी याद न हो तो सिपाही किस तरह सफलता पा सकता है ? बहुतसे मनुष्य बडे उद्योग और उत्साहके साथ धदा करते है, परन्तु उन्हें यश नही मिलता । क्यो ? इसी लिए कि उन्हें अभी तक पक्काविचार करना नही आया । पक्का विचार करना अनुभवसे प्राप्त होता है । किसी किसी मनुष्यमें यह गुण जन्मसे ही देखनेमें आता है, बचपनसे ही देख पड़ता है । इसे पूर्वोपार्जित पुण्यका फल अथवा बचपनसे ही अनुभवियोंकी सुसगति मिलनेका परिणाम मानना चाहिए । कच्चेविचार पक्केविचार ये दो शब्द प्राय. काममें लाये जाते है । पक्के विचारका यहाँ पर हमें कुछ विशेष विवेचन करना चाहिए । व्यापारमें चतुराईको 'पक्के विचार' नाम दे सकते है । पक्के विचार मनसे किसी विषयका निर्णय करनेका परिणाम है । देश कालका विचार कर योग्य रीतिसे वाणी और कर्तव्यके उपयोग करनेको पक्के विचारका परिणाम कहते है । कितने ही मनुष्योंमें इस प्रकारकी शक्ति जान पडती है कि वे हानिकारक और दुःखदायी सयोगोंमेंसे भी पार पडजाते है । इसका कारण विचारोकी परिपक्वता ही है । मनुष्यके हृदयमे नानाप्रकारकी बाते उठा करती है, उन्हे किसीको न जताना चाहिए, यही क्यों, उन सब बातोंका दूसरा कोई अनुमान कर सके ऐसा भी होने देना ठीक नहीं है । इसी तरहका व्यवहार कर सकना पक्के विचारका परिणाम है । अपने मनमें क्या है, इसकी गध भी दूसरोंको न आने पावे इसीका नाम पक्का विचार है । पराये मनुष्यपर और बेजाने-बूझे आदमीपर विश्वास न करना भी पक्के विचारका परिणाम है, । पक्के विचारका अस्तित्व मनुष्यबुद्धिमे स्वाभाविक रीतिसे होता है परन्तु प्रयत्न करनेसे उसका खूब विकास हो सकता है । अतएव उसकी प्राप्तिके लिए सबको प्रयत्न करना चाहिए ।

(४) **कार्यतत्परता**—हाथमे लिए हुए कामको पूरा करनेके लिए दृढतापूर्वक उसके पीछे निरन्तर लगे रहना यह एक आवश्यक **गुण** है। व्यापारीमे इसके होनेकी बडी आवश्यकता है। उद्योग, उत्साह और परिपक्व विचारके साथ कार्यतत्परता हो तो सम्भव नही है कि सफलता न हो। बहुत जगह सफलता नही देखनेमें आती, इसका कारण कार्यतत्परताका अभाव होता है—दृढ़तासे काममे लगे रहनेकी कमी होती है। उद्योग प्रारम्भ करे, तनमनसे उत्साहके साथ उसे चलावे, दृढ़ताके साथ उसमे लगा रहे, रात दिन उसपर विचार करे, सब ठौर ठीक ठीक व्यवस्था रक्खे और दृढ विचार तथा अनुभवके साथ काम करे, तो सफलता दूर न भाग जायगी। बहुतसे मनुष्य ऐसे देखनेमें आते है कि वे किसी बातका निर्णय करनेमे बडी जल्दी करते है। इसी लिए उनके विचार पक्के नही होते—कच्चे रहते है। कच्चे विचारोंका परिणाम सम्पत्तिकी हानि है। लक्ष्मी आती है देरसे, परन्तु जानेमे उसे देर नहीं लगती। इसका मतलब यही है कि पैसा पैदा होता है धीरे धीरे, बडे विचार और बड़े श्रमसे परन्तु उसके उडादेनेमे देर नही लगती है। बहुतसे मनुष्योंकी आदत होती है कि वे बहुत जल्दी बहुत पैसा कमा लेना चाहते है। जब उन्हे यह मालूम होता है कि हमे इतना पैसा नही मिलता तब उस धदेको छोड़ देते है—सारे सामान वगैरहको बेच—बाचकर दूसरे धंदेमें पड़ते है। उसकी भी यही दशा करते है। इस तरह बारबार धदा पलटते रहते है और सफलता नहीं पाते। इसका कारण यही है कि इन लोगोमें कार्यतत्परता—धदेमें लगे ही रहनेका गुण नही होता।

द्विविधामे पडा हुआ मनुष्य कुछ काम नहीं कर सकता। जिस मनुष्यके हृदयमें—यह करूँ या यह करूँ—इस प्रकारका आन्दोलन चलता रहे—कोई एक निर्णय नहीं होता है—वह काम कर ही कैसे सकता है? जो मनुष्य कुछ निश्चय करे भी, परन्तु उसका वह निश्चय स्थिर न रहे तो

वह पुरुष क्या काम कर सकेगा ? किसीकी सम्मतिसे कुछ निश्चय हो भी; परन्तु फिर वह डिगमगाकर दूर हो जाय तो उस निश्चयसे क्या लाभ ? दूसरोंकी फूँक कबतक ठहर सकती है ? मनुष्यको चाहिए कि वह समझदार दूरदर्शियोंकी सलाह लेवे, फिर दृढ निश्चय करे और उसके अनुसार अन्तमें कामपर लगजांव। कामको हाथ लेनेके बाद विघ्न-बाधाओंसे न डर कर धीरजके साथ कार्यतत्पर रहे, हिम्मत न छोडे। ऐसा होनेसे ही आशा की जा सकती है कि सफलता होगी, अन्यथा नहीं। यह बात बिल्कुल झूठ है कि धदेको अच्छी तरह चलाया जाय तो उसमें सफलता न हो। ऐसा हो नही सकता कि अमुक मनुष्यने प्रवीणताके साथ दस बरस तक अमुक धदेको चलाकर पैसे न कमाये हों। अतएव पहले पक्का- विचार करके फिर सफलता प्राप्त होने तक धंदेके पीछे लगे ही रहना चाहिए। विचार किये बाद निःसंदेह यह जान पड़े कि हमारा स्वीकार किया हुआ धंदा ठीक नही है तो उस समयकी बात दूसरी है। वरना हमारे पास इसके सिवा धंदेवालोंको देनेके लिए दूसरी कोई सलाह नही है कि.—

काम धरो जो हाथमें, धारो खूब विचार।
लगे रहो छोड़ो न फिर, रतन किये बिन पार॥

विचार कर हाथमें लिए हुए कामके पीछे लगे रहना, उसे पूरा करके ही छोडना सफलताका मुख्य साधन है। कार्यतत्परता सफलताकी कुंजी है।

(५) **धदेका ज्ञान** —धदा एक शास्त्रीय विषय है-कठिन कला है। उसका ज्ञान सम्पादन किये बिना काम नहीं चल सकता। विचार, कल्पना और चतुराई दूसरी बात है और प्रत्यक्ष अनुभव दूसरी बात। बहुतसे मनुष्य ऐसे देखनेमें आते है कि जिन्हे धंदेका न कुछ ज्ञान होता है और न कुछ अनुभव। उनका खयाल होता है कि हरएक

मनुष्य–जब चाहे तब–जिस किसी धंदेको–कर सकता है, उसे किसी प्रकारकी शिक्षाकी कोई आवश्यकता नही है । बेंचा-खोंची करनेमें भला पढ़ने लिखनेकी शिक्षा पानेकी आवश्यकता ही क्या है ? क्रय-विक्रय करनेमें कोई वेद तो पढ़ने ही नही पढ़ते, शास्त्रचर्चा तो करनी ही नही पड़ती ! व्यापार कोई शास्त्र तो है ही नहीं ! इत्यादि । " इस अज्ञानका कोई ठिकाना है ! परन्तु बड़े खेदके साथ कहना पड़ता है कि यही अज्ञान हमारे व्यापारी-मंडलके बहुत बड़े समुदायमें भरा पड़ा है । इस विषयका इस लेखकको प्रत्यक्ष अनुभव है । इस लेखकने ऐसे अनेक व्यापारी बालकोंको देखा है कि जिन्हें उनके मा बापोंने बहुत ही कम शिक्षा दी है । व्यापार शिक्षा बड़े खर्चसे आती है । इसका अनुभव प्राप्त करनेमें बड़ी हानियाँ उठानी पड़ती है । व्यापार एक व्यावहारिक विद्यालय (प्राक्टिकल कालेज) है । इस विद्यालयमें जो अनुभव होता है वही प्रतिष्ठापत्र है और जो नुकसान उठाना पड़े वह फीस है । सब प्रकारके विचार, अनुभव, और अनुभवियोंसे ज्ञान सम्पादन करते हुए धंदा करना चाहिए । हमारी सलाह तो यह है कि कुछ समयतक उम्मीदवारी करके फिर काम प्रारंभ करना चतुराईका काम है । धंदेके लिए जो जो बाते आवश्यक है उन सब बातोंको जान लेना ही व्यापारी-शिक्षा या व्यापारी ज्ञानका पा लेना है । अलग–अलग व्यवसायमे अलग-अलग गुणस्वभावकी आवश्यकता होती है और उन उन गुणस्वभावोंका सम्पादन कर लेना अत्यन्त आवश्यक है। इनके बिना सफलता नही हो सकती। अतएव धंदेसम्बन्धी ज्ञान शिक्षा और अनुभव प्राप्त करनेके प्रयत्नमें व्यापारियोंको दुर्लक्ष न करना चाहिए ।

(६) **मनुष्यकी परख**–व्यापारमें यह आवश्यक है कि व्यापारीको मनुष्योंके स्वभावकी परख हो । कितनोंहीमें यह गुण स्वाभाविक होता है और कितनोंहीमें अनुभवसे आता है । बहुतसे मनुष्य ऐसे

होते हैं जो मुख देखकर आदमीकी परीक्षा कर लेते है । मनुष्यकी परख उसकी मौखिक बातोंसे नहीं उसके बर्तावसे की जानी चाहिए । मनुष्यके मुखसे उसके आन्तरिक भावोंका जानलेना एक निपुणताका काम है । अनुभव बिना मनुष्यके स्वभावकी परख करनेमें मन--हीं-मन बहुतसे विचार करना पड़ते है । मानवी स्वभावके पृथक्करणकी कला व्यापारीको आनी चाहिए । उन्हें मनुष्यके चेहरे, वर्ताव आदिको देखकर उसकी परख करना आना चाहिए । स्नेहियोकी ओरसे मनुष्यकी प्रशंसा होती है और विरोधियोंकी ओरसे निन्दा । इन दोनों पक्षोंमे अतिशयोक्ति हेतु, मतलब और सिद्ध-साधकता आदि हो सकती हैं । इनमेंसे सच्चाई जान लेनेकी योग्यता व्यापारीमें होनी चाहिए । बहुधा देखा जाता है कि मनुष्यस्वभावको न परख सकनेके कारण बहुतसे मनुष्य फँस जाते है । मनुष्य स्वभावको न परखकर व्यवहार करनेसे कभी कभी भयंकर हानियाँ उठाना पड़ती है । इस गुणके न होनेके परिणाममें बहुतसे दिल–अन्तःकरण, शरीर, सम्पत्ति और जीवन तकका नाश हो गया है । अतएव प्रत्येक धंदेवालेको मनुष्यस्वभावका परीक्षक होना अत्यावश्यक है ।

(७) **पूरी जानकारी**--व्यापारीके लिए यह आवश्यक है कि उसे पूरी जानकारी हो । जो पुरुष यह नही जानता कि संसारमें क्या उथल-पथल हो रही है, क्या घटा बढ़ी हो रही, वह व्यापार कर ही नही सकता-उससे व्यापार होवेगा ही नही । सब प्रकारकी जानकारी एक प्रकारकी पूँजी है । हमें यह कभी न सोचना चाहिए कि हम जिस प्रकारका धंदा करते है उसका ज्ञान हो गया कि बस ! हमें लोकाचार, लोक-रूढि, धार्मिक–विचार, समाज--पद्धति, रीति, रिवाज, बार–त्योहार, मेले–ठेले, लोकरुचि और लोक–व्यवहार आदि देश देशके विषयोंकी जानकारी होना चाहिए । इस जानकारीसे कभी न कभी लाभ उठाया

ही जा सकता है ! राजदरबारके कायदे और कानून, जकात और कर, मार्ग और सड़क, तालाब और कुए, नदी और नाले, रेलवे स्टेशन और जंकशन, पोस्ट आफिस और तारघर, तथा कौनवस्तु कहाँ पर कितनी कैसी और किस मोलकी पैदा होती है या बिकती है इत्यादि विषयोंका ज्ञान व्यापारीको लाभदायक हुए बिना नहीं रह सकता । व्यापारीके लिए यह आवश्यक है कि वह भाँति भाँतिकी पुस्तकें और समाचारपत्र पढ़ा करे जिससे उसे सामाजिक हलचल वगैरहका ज्ञान होता रहे । इस जानकारीके न होनेसे व्यापारीको नुकसान होता है । मनुष्यस्वभावकी लहर किस तरहकी उठ रही है, इस बातको जाने बिना व्यापारीका काम नही चल सकता । भाँति भाँतिके उद्योग-धंदे, काम-काज, कल-कारखाने और आविष्कार वगैरहकी जानकारी व्यापारीको होना चाहिए । व्यापारीको ऐसा कहनेसे काम न चलेगा कि संसारकी हल-चलोंके जाननेसे मुझे क्या मतलब है । उसे लड़ाई, सन्धिपत्र, इकरारनामे, वर्षा, अग्निकोप, जहाजोंका डूबना आदि विषयोंकी भी जानकारी प्राप्त करना चाहिए । जिस व्यापारीके ऐसे विचार हो कि मुझे अपनी दूकान और घरके सिवा और और बातोंसे कुछ मतलब नहीं है, वह व्यापारी ही नहीं है—वह कुएका मेंडक है । अतएव आवश्यक है कि व्यापारीकी जानकारी बढ़ी हुई हो—पूरी हो ।

(८) **बोलनेकी चतुराई**—व्यापारीमें बोलनेकी ऐसी चतुराई होना चाहिए कि वह सुननेवाले अपने ग्राहकों पर अपना सिक्का जमा सके । व्यापारीको ऐसा बोलना आना चाहिए कि उसके सुननेवालेको विश्वास हो जावे कि बोलनेवालेकी खूब जानकारी है, वह प्रतिष्ठित और विद्यावान् पुरुष है । यह बोलनेकी चतुराई बहुत करके स्वाभाविक होती है और ऐसा होने पर भी श्रमसाध्य है । यह एक साधारण कहावत है कि 'बोलनेवालीके खट्टे बेर भी बिक जाते हैं ।' एक बोलने या

अच्छी तरहसे बात चीत करनेकी कलाके बिना और सब बातें मिट्टी हो जाती है। पूँजी, जानकारी, कार्यतत्परता और बोलनेकी चतुराई इस चतुरंगी सेनासे व्यापारक्षेत्र स्वाधीन किया जा सकता है। इन सबका महत्त्व एक समान है।

बोलनेकी चतुराईसे लुच्चपनको छुपा देने या किसीको धोका देकर ठग लेनेसे मतलब नहीं है। बोलनेमें शुद्धता और प्रामाणिकता होना ही चाहिए। वस्तुस्थितिको—असलियतको अच्छी तरह समझा देनेकी कला-का नाम ही बोलनेकी चतुराई है। शुद्ध वक्तृत्व यह विद्वानोंकी एक कला है। इस कलासे वे श्रोताओंके अन्त.करणोंको खींच लेते है। इसी तरह बोलनेकी प्रामाणिकता और चतुराईसे व्यापारीको अपने ग्राहकोंका दिल मुट्ठीमें कर लेना चाहिए। जैसे व्याख्यान देना एक कठिन कला है, वैसे ही बोलनेकी चतुराई भी।

(९) **सभ्यता**—सभ्यतापूर्ण व्यवहार सम्पत्ति प्राप्त करनेका एक उत्तम मार्ग है। जिसे सभ्यताकी आवश्यकता न जान पड़ती हो, जो अपनी सभ्यताका प्रभाव लोगोंपर न डाल सकता हो और जो सभ्य न हो, उसके लिए यही अच्छा है कि वह व्यापारके धंदेसे दूर ही रहे। मनुष्यको चाहिए कि वह, उसके पास आनेवालोंके साथ सभ्यतासे बातें करे और सभ्योंके ऐसा बर्ताव करे। सच्चा व्यापारी असभ्यतासे कभी किसीके मनको न दुखावेगा। यदि उसे किसी कामके लिए 'नाही' करनी होगी, तो बड़ी सभ्यतासे करेगा। स्वाभिमान या अपने महत्त्वका अर्थ यह नहीं है कि तुच्छ गर्व किया जाय। व्यापारीका बड़प्पन-व्यापारीकी श्रेष्ठता-का आधार उसके सभ्यतापूर्ण व्यवहारपर ही है। आनन्दकी बात है कि हम लोगोंमें बहुतेरोंकी यह धारणा सत्य है कि सभ्यताके बिना बड़प्पन हो ही नहीं सकता।

(१०) **स्वावलम्बन**—अपने पैरोंपर खडे होनेका नाम स्वावलम्बन

है । यह गुण प्रत्येक मनुष्यमें कूट-कूट कर भरा होना चाहिए । हरएक आदमीको अपना आधार अपने पर ही रखनेका प्रयत्न करना चाहिए । स्वयं खूब सोच विचारकर कार्य निर्णय करना और अपने ही कौशलसे उसमें सफलता सम्पादन करना इसीका नाम स्वावलम्बन है । जिसमें स्वावलम्बनकी शक्ति न हो, उसे व्यापार-धंदेमे कभी न लगना चाहिए । स्वावलम्बनकी शक्ति जिनमें न हो उनके लिए यही बहतर है कि वह नौकरी-चाकरी, क्लर्की गुलामी वगैरहमें पड़कर पेट भरता रहे ।

कौनसा काम, कब और किस तरह करना इस बातका जिसे ज्ञान न हो उसे व्यापारमें सफलता नही हो सकती । मै अपनी ही चतुराईसे सिद्ध हो जाऊँगा, इस प्रकारकी जिसमे हिम्मत न हो उसमें स्वावलम्बनका बल आवेगा ही नही । ऐसे मनुष्योंको चाहिए कि वे व्यापारमें-या किसी भी स्वतंत्र धंदे-रोजगारमे न पड़े । जो स्वावलम्बी नही है वह सेठ होने योग्य नही है—गुलाम होने योग्य है-नौकर-चाकर होने योग्य है । उसके लिए क्लार्की, कारकूनी, मुहर्रिरी आदि कार्य है-स्वतन्त्र व्यापार नही ।

धंदेमें सफलता प्राप्त करनेके साधन ।

व्यापारमें बरकत मिले, हाथमें लिया हुआ रोजगार सफल हो, इस तरहकी जिसकी इच्छा हो उस मनुष्यके लिए नीचे लिखी हुई कुछ बातोंकी अनुकूलता अवश्य होना चाहिए.—

(१) **धंदेकी योग्य पसन्दगी** —सब अनुकूलताओंमे धंदेको ठीक तरहसे पसन्द करना पहिली बात है । अपने ज्ञान, स्वभाव और रहन-सहनके अनुकूल धंदेको खूब पक्का विचार कर पसन्द करना व्यापारीका पहला काम है । धंदेको पसन्द करते समय अपनी शारीरिक प्रकृति और मानसिक प्रवृत्तिका विचार करना बहुत ही आवश्यक है ।

जिस धंदेमें अपना मन न लगता हो, जो अपनी प्रकृतिके प्रतिकूल हो उस धंदेमें न पडना ही चतुराईकी बात है। जो धंदा अपनेको पसन्द नहीं, जिसमें अपना मन न लगता हो, और जिस धंदेके योग्य गुण न हो ऐसे धंदोंमे पड़नेसे हानि हुए बिना नही रहती। बहुतसे मनुष्योंने इसी प्रकार नुकसान उठाया है। इससे जो धंदा अपनेको खूब पसन्द हो हमको वही करना चाहिए। **अयोग्य पुरुषो नास्ति योजकस्तत्र दुर्लभः**—यह वाक्य स्मरण रखने योग्य है। किसी किसीका स्वभाव ऐसा होता है कि वह चाहे जिस धंदेमें लग सकता है, किसीको धदा करना बिल्कुल नहीं सुहाता, बहुतसे मनुष्य ऐसे भी होते है कि जिन्हे बिना कुछ परिश्रम किये निठल्ले बैठे-बैठे-खाना अच्छा लगता है। बहुतसे मूर्खोंका मत है कि जिन्हें बिना श्रम किये खाने-पीने, पहरने-ओढने और रहने-सहनेके लिए सब कुछ तैयार मिल जाता है वे बडे भाग्यवान् है, परन्तु यह मत बडा ही घातकी है--इसमें बड़ी मूढता है। श्रमकी योग्यता– परिश्रममें भरे हुए आनन्द–श्रममें समाई हुई सम्पत्ति-काम करनेमें भरे हुए बडप्पनको हमारे बहुतसे भारतीय बन्धु बिल्कुल नहीं सोचते यह उनका और सारे देशका दुर्भाग्य है!

अपनी योग्यताः—इसके सिवा धदा करनेवालोंको जो देखनेकी बात है वह यह है कि मेरी स्वत.की योग्यता कैसी है। अपनी प्रियता और योग्यताको पहले स्वयं ही देखना चाहिए। अपनेको कौनसा धंदा प्यारा है, स्वय किस धंदेके योग्य है और किस धंदको अच्छी तरह कर सकेगा इस बातका निर्णय प्रत्येक मनुष्यको अपने आप करना चाहिए। दिमागमें तरंग उठी कि निर्णय होगया, यह ठीक नही–ऐसे निर्णय चिरस्थायी नही होते। निर्णय ऐसा होना चाहिए कि वह चिरस्थायी हो, शीघ्र ही हिल न जावे। धंदेवालोंके मुख्य गुण, शक्ति, खोज, साहासिकता और बोलनेकी

चतुराई हैं । इन गुणोंकी हर एक धंदेमे समानरूपसे आवश्यकता हो ऐसा नहीं है, परन्तु किसी न किसी अंशमे उनकी आवश्यकता है । व्यापार-धंदेके लिए आवश्यक गुणोंका विवेचन एक स्वतन्त्र ग्रन्थमें अच्छी तरह होना चाहिए । यहाँपर तो हम सक्षेपमें--बड़े आग्रहसे इतना ही कहते हैं कि धदेमें लगनेसे पहले प्रत्येक मनुष्यको इतना अवश्य विचार कर लेना चाहिए कि मै किस धदेके उपयुक्त हूँ ।

(३) **धंदे सम्बन्धी ज्ञान**.—व्यापारीको जिस धदेका बखूबी ज्ञान होता है उसे उसकी सफलतामे विशेष बाधा नहीं पडती । यद्यपि इस ज्ञान और सूक्ष्म बुद्धिका काम मुनीम, गुमाश्ता वगैरहसे भी लिया जा सकता है परन्तु स्वयं ज्ञान न हो तो सफलता अशक्य हो पड़ती है । इसलिए यह आवश्यक है कि अपने धदेके सम्बन्धमे पूरी-पूरी प्रवीणता सम्पादन की जावे कि जिससे सफलतामें बाधायें न रहे ।

(४) **पूरी पूँजी**.—किसी धंदेके प्रारम्भ करनेके पहले उसमें बरकत मिलनेके लिए यह आवश्यक है कि पूरी पूँजी इकट्ठी कर रक्खी जावे । पूँजीकी कमीसे अनेक लाभदायक धदे डूब जाते है । तेजी मदीका लाभ उठानेके लिए, और धंदेको बढ़ाते जानेका प्रयत्न करनेके लिए पूरी-पूरी पूँजीकी आवश्यकता है । यदि उस पूरी-पूरी पूँजीकी व्यवस्था न की हो तो धदेमें सफलता नहीं मिल सकती ।

(५) **योग्य व्यवस्था**.— योग्य व्यवस्था न की गई हो तो धंदेमें बरकत होना सम्भव नहीं है । क्रय-विक्रय, पत्र-व्यवहार, नामा, वगैरहकी अच्छी व्यवस्था रखना अत्यन्त आवश्यक है ।

(६) **हिम्मत और दृढता**.— व्यापारीमें अवश्य होने योग्य ये दोनों गुण है । और और सारी बातें होनेपर भी यह नहीं कह सकते कि सफलता होगी-ही-होगी । सफलता ऐसी चीज तो है नहीं, जो, एक दिनमें, एक सप्ताह में, एक महीनेमें, या एक वर्षमे ही प्राप्त हो

जायगी; वह तो बहुत समयमें और बड़े कष्टसे मिलती है । इस लिए आवश्यक है कि व्यापारी हिम्मत रक्खे-निराश न हो । निराश होना सफलताको खोना है । हिम्मत और दृढ़ता सफलताके साधन हैं ।

(७) **बचत करना**.-सफलता होनेका यह भी एक मुख्य साधन है। मनुष्य पैसा प्राप्त करनेसे-धन कमालेनेसे कभी धनवान् नहीं होता परन्तु कमाये हुए धनको संग्रह कर रखनेसे धनवान् होता है। मनुष्य कितना कमाता है इसकी अपेक्षा यह देखना चाहिए कि वह बचाता कितना है । बचत करनेसे यह मतलब नहीं है कि मनुष्य कजूंस-मक्खीचूस हो जाय-चमडी जाय पर दमड़ी न जायका दृष्टान्त बन जाय । आवश्यक व्यय मितव्ययताके साथ करना ही चाहिए, परन्तु फिजूलखर्च होना भी ठीक नहीं। मितव्ययी होकर धनसंग्रह करना सफल होनेका मुख्य साधन है ।

हम व्यापारमें सफलता पानेके मुख्य साधनोका संक्षेपमें विवेचन करचुके ये साधन पास हो तो प्रसन्नतासे मानलेना चाहिए कि सम्पत्तिके भंडारकी कुंजी अपने हाथमें ही है । इस कुंजीसे हम लक्ष्मीके भंडारको खोलकर सम्पत्ति प्राप्त कर सकते है । यह सच है कि सारी सम्पत्ति हमारे ही हाथ न पडेगी--बहती हुई नदीसे सब कोई पानी पीवेगा। उस सम्पत्तिमे श्रमविभागके अनुसार अन्यान्य मनुष्योंका भी अधिकार है । लक्ष्मी पानेवालेका काम है कि वह उसे यथा योग्य औरोंको भी बॉटे ।

धंदेमें हानि पहुँचनेके कारण ।

कई बार ऐसा देखनेमें आता है कि मनुष्य धंदा तो करता है फायदेके लिए और उठा बैठता है नुकसान । इसके कारण अनेक है । उन कारणोंसे धदा करनेके पहिले ही वाकिफ हो जाना आवश्यक है । यहाँ पर हम उनका विचार करते हैं ।

(१) **अयोग्य पसंदगी:**—जो धंदा अपने करने योग्य नहीं है उसे पसन्द करना नुकसान उठानेका पहला कारण है । जिस धंदेकी ओर अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति नही है उसमें मन लगेगा ही नहीं और जिस धंदेमें मन नहीं लगता वह चलाया भी नहीं जा सकता । जो धंदा चलाया न जा सके उसे पसन्द करना नुकसान उठाना ही है ।

(२) **अज्ञानता.**—जिस धंदेको हमने पसन्द किया हो उसके सम्बन्धकी सारी जानकारी हममें होनी चाहिए । उस धंदेकी सूक्ष्माति-सूक्ष्म बातोंकी–खूबियोंकी हमे उत्तम जानकारी होनी चाहिए । यदि यह जानकारी नहीं होगी तो नुकसान उठाना पड़ेगा । जिस धंदेकी जानकारी न हो उस धंदेमें सफलता मिलना बहुत ही कठिन है । अपने हाथके नीचे कुशल और चतुर मनुष्य हों तो उनके द्वारा उत्तम रीतिसे काम लिया जा सकता है; परन्तु इस काम लेनेमें भी चतुराईकी आवश्यकता है । अपने हाथ नीचेके नौकर-चाकरोंकी चतुराईका पूरा-पूरा लाभ अपनेको पहुँच सके, इस तरहसे काम ले सकना भी एक प्रकारकी उपयोगी कला है । नौकरोंको यह न मालूम हो कि मालिक तो हमारे हाथकी गुड़िया है । इस लिए आवश्यक है व्यापारीको अपने धंदेका अच्छा ज्ञान हो । यदि नौकरोंको यह मालूम हो जायगा कि मालिक कुछ नही समझता, तो वे मालिकके लाभमेंसे अनुचित रीतिसे अपना भाग लेने लग जॉयगे और उनके अप्रामाणिक

हो जानेसे धंदेमें लाभ ही हो, इसकी भी कोई आशा नही की जासकती। इससे यह बात सिद्ध हो जाती है कि किसी भी धंदेको प्रारम्भ करनेके पहिले उसके विषयका ज्ञान सम्पादन कर लेना चाहिए। ज्ञान सम्पादन किये बिना धंदा नही छेड़ना चाहिए। हमारे भारतमें इस बातकी कमी नही है कि बहुतसे धंदे मुनीमोंकी चतुराई, गुमाश्तोंकी बुद्धि और नौकर-चाकरोंकी समझदारीपर चलते है। परन्तु ऐसे धंदोंमें प्राय: नुकसान होते हुए भी देरी नही होती। बहुत कम ऐसे उदाहरण दिये जा सकते है, जिनमे नुकसान न हो। कहनेका तात्पर्य यह है कि धंदेकी जानकारीका न होना नुकसान होनेका दूसरा मुख्य कारण है। एक समयका जिक्र है कि एक मनुष्यने एक धनवानसे पूछा कि "आपने इतना धन कैसे कमाया ?" इसके उत्तरमे उस धनवानने कहा कि "जिस धंदेकी मुझे पूरी जानकारी थी उसे ही मैने किया और उसके पीछे बडे उत्साह और धैर्यके साथ लगा रहा।" यह उत्तर सदा ध्यानमें रखने योग्य है।

(३) **धंदेकी ओर ध्यान न देना:**—अपने धंदेपर ध्यान न देना-स्वीकार किये हुए धंदेपर दुर्लक्ष करना नुकसान होनेका तीसरा कारण है। अपने धंदेपर ध्यान देनेसे—दिनरात उस पर लक्ष रखनेसे--दिन दिन मनुष्यकी साख बढती जाती है और वह धीरे धीरे लाभ उठाता है। एकदम श्रीमान् होनेकी लालसा रखनेसे मनुष्यका चित्त धंदेमें नही जमता। अपने धंदेमें चित्तको न जमाकर इधर-उधर मगज खपानेवाले पुरुष लाभ नही उठा सकते। अपने धंदेको छोड़कर और और बातोंमें माथा खपाना नुकसान उठानेका कारण है। जो लोग ऐसा करते है उन्हें शीघ्र ही नुकसान उठानेका अनुभव हो जाता है। चतुराई बतलानेको जाते हुए मूर्खताकी पदवी ही मिलती है। इसी तरह ग्राहककी आबरू, साख और शक्तिका विचार किये बिना ही उधारका धंदा करना

नुकसान उठानेका कारण है। इस लिए किसी भी ग्राहक या व्यापारीके साथ उधारका व्यवहार करनेके पहले ऊपर लिखी हुई बातोंपर लक्ष्य देना आवश्यक है। बिना इन बातोंपर लक्ष्य दिये जोखिममें उतरना ठीक नहीं। इस तरह जोखिममें उतरनेकी जगह उतना कम व्यापार करना ठीक है।

(४) **साख और उसका दुरुपयोग**.—यह भी धंदेमें नुकसान होनेका मुख्य कारण है। साखके विषयमें स्वतन्त्र विचार हम पहले कर चुके है। अब उसे यहाँपर दुबारा कहनेकी कोई आवश्यकता नहीं है तथापि यहाँपर इतना कहना चाहिए कि मनुष्यकी जो साख बाजारमें बंध रही हो वह दिन दिन बढ़ती जावे तो धंदेमें सफलता होनेका कारण होती है। यदि किसीका भरोसा कम होता जायगा तो उसकी साख कम होती जायगी और इससे व्यापारमें भी नुकसान होगा। इससे यह समझ रखना चाहिए कि जिसकी जितनी ज्यादा साख बढ़ी हुई है उसकी उतनी ही पूँजी और सफलताका साधन बढ़ा हुआ है। इस वास्ते हमें वैसे ही काम करने चाहिए जिससे साख बढ़ती जाय। कितनी ही बार ऐसी आकस्मिक घटनाएँ हो जाती है कि जिनके कारण हमारी अनिच्छासे भी साख घटनेके प्रसग आजाते है। जैसे अकाल बीमारियों आदि। आग लग जाने, चोरी हो जाने जल-प्रलय हो जाने और अन्यान्य पुरुषोका दिवाला निकल जाने आदि कारणोंसे भी साख हिल जाती है। यद्यपि ऐसे प्रसगों पर मनुष्यके व्यवहार धंदा और स्थितिका कोई दोष नही होता परन्तु ऐसे अचीते प्रसंगोंमें अपनी साखको बनाये रखना बड़ा दुर्घट, बड़ी चतुराई और आवश्यकताका काम है। इसीमें व्यापारीका कौशल है। जिसमें यह कौशल नही उसे बिना कुछ लिए दिये धौल-धप्पा खानेकी नौबत आ जाती है। ऐसे मौकोंपर कोई उपाय नहीं रहता। खैर कुछ भी हो,

व्यापारीको याद रखना चाहिए कि व्यापारमें साखके बराबर महत्वकी कोई चीज नहीं है । साख व्यापारका प्राण है, साख व्यापारका सौभाग्य है,–उसका दुरुपयोग न करना चाहिए । दुरुपयोगसे वह मारी जाती है । साखका कम होना या जाना व्यापारमें हानिकारक है ।

(५) **व्यर्थव्ययः**—अपने लाभको न देख–अपनी आमदनीका विचार न कर–ऑख मींचकर खर्च करनेका नाम व्यर्थ-व्यय है । अपनी आयसे कम खर्च करना--सो भी आवश्यकताके विचारसे–मितव्यय कहलाता है । आयसे खर्च बढ़ेगा तो दिवाला निकलेगा ही । आयसे कमव्यय होगा तभी लाभ कहा जायगा । धंदेमें लाभ उठानेके लिए खर्चकी मद कम और आमदकी ज्यादा होना चाहिए। दिवालिया लोगोंमें सौमेंसे पचास–साठ ऐसे होंगे कि जिनका दिवाला खर्चकी ज्यादतीसे निकला हो । कम खर्च करनेसे ही व्यापारीकी चतुराई जानी जाती है और उसीमें उसे लाभ है । व्यर्थव्यय नुकसान होनेका एक कारण है। अतएव और-और बातोंके साथ साथ व्यर्थव्यय पर ध्यान देना भी आवश्यक है ।

(६) **दुर्गुण और बुरी आदतें**.–दुर्गुण और बुरी आदतोंसे कभी कही सफलता नहीं प्राप्त होती, फिर व्यापारमें तो मिल ही कैसे सकती है ? आलस्य, उतावली, लापरवाही, घमंड, दुर्लक्ष्य आदि दोष व्यापारके घात करनेवाले है । इन दोषोंसे चाहे और-और बातोंमें भारी हानि न भी पहुँचे, परन्तु व्यापारमें तो पहुँचती है । इस धंदेके अनुकूल अपनी आदत बना लेनी चाहिए और उसीके अनुकूल बर्ताव भी करना चाहिए ।

इनके सिवा धंदेमें हानि होनेके कुछ नैसर्गिक कारण भी होते है । अकाल, जलप्रलय, अग्नि-प्रकोप, रोग, तूफान, भूकप आदि ऐसे ही कारणोंमें हैं । बीमा करनेकी पद्धतिसे ऐसी योजना की गई है कि आग तूफान आदि अनर्थोंसे व्यापारको हानि न पहुँचे । परन्तु रोग अकाल

भूकंप आदिका निवारण कोई नहीं कर सकता। चोरी डकैतीकी रक्षा राज्य करता है। ऊपर हमने धंदेमें नुकसान होनेके कारणोंका दिग्दर्शन किया है। जहाँतक बन पड़े व्यापारियोंको इनसे बचना चाहिए—होनहार और समझदार व्यापारीका यही कर्तव्य है।

उधारके व्यापारसे हानि।

हम माल ले आवें और उसके दाम कुछ दिनोंके पश्चात् देवें तो इस प्रकारके व्यवहारको उधारका व्यवहार कहते है। यह भी व्यापारकी एक परिपाटी है। परन्तु इस रीतिसे व्यापारी और ग्राहक दोनोंको नुकसान होता है। इस प्रकारके व्यवहारसे दोनोंकी जो हानि होती है सो किसीसे छुपी नहीं होती। उधार लानेका मूल कारण मनुष्यके पास रुपयेकी तंगी होती है। उधारके व्यवहारसे बरकतमें बाधा पड़ती है। उधार व्यापारका सकट है—घुन है। उधार व्यापारकी बीमारी है। इस बातके समझानेकी विशेष आवश्यकता नहीं जान पड़ती कि उधार व्यापारका संकट किस तरह है।

क्रय–विक्रयके धंदेको व्यापार कहते हे। माल बेचनेवालेको किसी न किसीसे माल खरीदना ही पड़ता है। स्वयं नक्द रुपया देकर माल लाना और ग्राहकोंको उधार देना मानो अपने पासकी सुरक्षित रकमको दूसरोंके सिपुर्द कर देना है! व्यापारमें रुपयेको खूब फिरते रहना चाहिए। इसीसे धंदे–रोजगारकी बढ़ती होती है। उधारसे रुपया चक्कर नहीं लगाता, एक जगह रुक जाता है, इससे रोजगार चमकनेमें बाधा पड़ती है। नक्दके लेन–देनसे नये मालकी खरीद शीघ्र होती है और व्यापार खूब बढ़ता है। उधारके व्यापारमें रकम रुध जाती है और नया माल खरीदनेमें काम नहीं आती। यह माना कि उधारके व्यापारमें विशेष

नफा मिलता है परन्तु यह बात भूलने योग्य नहीं है कि भारी व्याज और बहुत ज्यादा उगाई ये दोनों बातें खास तौर पर दगा देनेवाली चीजें है। *व्यापारकुशल पुरुषोंको नक्द और उधार व्यवहारके लाभालाभ–फायदा* और नुकसान समझानेकी आवश्यकता न पड़ेगी। जिसके पास नक्द रुपया देनेको नहीं होता वही उधार लेता है। उधार लेनेमें नुकसान है, ऐसा जानते हुए भी उधार माल लिया जाता है। खुले दिलसे उधारका व्यवहार करनेसे सैकड़ों व्यापारी बैठ गये है। इस बातको जानते हुए भी उधारका व्यापार करना जानबूझ कर संकट झेलना है–प्रकाश होते हुए भी कुएंम गिरना है।

उधार यह व्यापारका बड़ा भारी रोग है। व्यापार चलते रहनेके लिए उसमें लगाई हुई रकम फिरती ही रहना चाहिए। रुपयेका इधर-उधर फिरते रहना व्यापारका जीवन है। उधारके व्यवहारसे रुपयेके पूरे-पूरे चक्कर नही लगते। रुपयेका चक्कर न लगना व्यापारकी नाडी बन्द होना हैं।

उधार व्यापारको पोला कर डालनेवाला कीड़ा है। उधारका व्यापार करनेवाले व्यापारीकी दूकान लोट गये बिना नहीं रह सकती। उसका धंदा बन्द हुए बिना नही रह सकता। एकबार इस कीड़ेका व्यापारमें प्रवेश हुआ कि यह व्यापारको खोखला करके ही छोड़ता है। अतएव इसे भूल-चूक कर भी व्यापारीको अपने व्यापारमें न प्रविष्ट होने देना चाहिए।

उधार महापाप है। उधारका व्यवहार करनेकी प्रवृत्ति होनेका सच्चा कारण ज्यादा लाभ होनेकी इच्छा है। उधार देनेमें यही वासना होती है कि वाजबी कीमतसे ज्यादा दाम मिलें। इसीसे उधार दिया जाता है। ग्राहकसे ज्यादा दाम लेने और भोले-भोले गरीबोंको ठगनेकी आकांक्षा, अपने प्रतिस्पर्धीके ग्राहकोंको अपनी ओर खीच लेने, या अपनी

स्पर्धा करनेवाले नये व्यापारीकी दूकानको न जमने देनेकी तुच्छ भावनासे भी उधारका व्यापार प्रारम्भ होता है। यह बात बेइज्जतीकी है। दूसरोंको खड्डेमें डालनेकी इच्छा करना स्वय खड्डेमें गिरना है।

इन सब बातोंका साराश यह है कि उधारके व्यापारसे कभी किसीका भला नहीं हुआ, न होता है और न कभी होगा। इस वास्ते इस प्रकारके व्यापारका जितना जल्दी नाश हो उतना ही अच्छा है। समझदार व्यापारियोंका कर्तव्य है कि वे उधारके व्यापारको उत्तेजन न दें और जितनी जल्दी कर सकें उधारके व्यापारको बंद कर दें।

व्यापारमें विश्वासका महत्त्व।

व्यापार—व्यवसायमें जिस समय एतबार, भरोसा, विश्वास, आदि शब्दोंका व्यवहार किया जाता है उसी समय उन शब्दोंका अर्थ समझमें आजाता है। तथापि उनकी व्याख्या करना आवश्यक है। विश्वासका अर्थ भरोसा कह देनेसे काम न चलेगा, उसका ठीक ठीक अर्थ समझानेके लिए कुछ दृष्टान्त देना उचित है।

विश्वास एक प्रकारका मानसिक धर्म है। विश्वास, मनकी स्वाधीनताकी बात है। मनके एक प्रकारके व्यापारको विश्वास कहते है। कल्पना कीजिए कि रामकुमारने द्वारकादासको ६००) रुपया दिया और अपने मनमें सोच लिया कि यह रुपया अमुक समयतक लौट आयगा। उसके मनमे जो यह भाव पैदा हुआ कि यह रुपया लौट आयगा—इसी भावका नाम विश्वास है। विश्वासके कारण ही मनुष्य उपकारको नही भूलता, वह समयपर दी हुई सहायताको स्वीकार करके कृतज्ञतापूर्वक रकम लौटा देगा और प्रत्युपकार करेगा।

व्यापारमें विश्वास प्रधान चक्र है। जितने व्यवहार होते हैं उनका आधार विश्वास पर है। विश्वास न हो तो व्यापार-व्यवसाय, धंदा-रोजगार

आदि सर्वथा चल ही नही सकते। विश्वासका ऐसा ही महत्त्व है। परन्तु यह बात भी भूलने लायक नहीं है कि व्यापारमें ठगाई धोखा नुकसान आदि भी विश्वासहीके कारण होते हैं। ऐसे होनेके अन्यान्य कारण भी होते है परन्तु उनमें विश्वास मुख्य है।

इस लिए व्यापार-व्यवसाय करनेवालोंको विश्वासके विषयमें बहुत ही होशियारी रखनी चाहिए। व्यापारमें किसीका विश्वास न करना, यह एक ओरसे प्रतिपादित किया जाता है और दूसरी ओरसे यह कि बिना विश्वासके धंदा चल ही नहीं सकता। अनुभवकी ओर देखें तो यह उपदेश दोनों ओरसे समान मिलता है। मनुष्यकी योग्यता और आबरूका आधार उसके विश्वास पर है। मनुष्यकी परीक्षा करनेका साधन भी विश्वास है। इस लिए विश्वासके सम्बन्धमें बड़ी सावधानी रखना उचित है। विश्वासघात करना महापाप है-बड़ा भारी अपराध है-भयंकर गुनाह है। सरकारी कानूनसे भी विश्वासघातकी कड़ी सजा दी जाती है।

विश्वास सर्वव्यापी है। विश्वास श्रेष्ठ मनोधर्म है। विश्वास पर विश्व चल रहा है। विश्वास सुखका साधन है। विश्वास हो तो चिन्ता, दुःख, त्रास, आदि नही रहते। परमेश्वर पर विश्वास चाहिए, धर्मपर विश्वास चाहिए, मनुष्यपर विश्वास चाहिए, अपने आपपर विश्वास चाहिए और विश्वास चाहिए अपने कामपर। विश्वासके बिना इस संसारमें सफलता नही मिलती। शरीरमें जैसे प्राण है वैसे ही व्यापारमें विश्वास है।

विश्वाससे विश्वास बढ़ता है। विश्वास किये बिना विश्वास उत्पन्न नहीं होता। यदि आपका व्यवहार विश्वासपूर्ण है तो संसार आपका विश्वास करेगा ही। अपने सदाचरणसे विश्वास उत्पन्न होता है। विश्वासके सिरपर हजारों अनर्थ गिर सकते है। विश्वास करना बड़े भारी अंतःकरणका काम है। अविश्वासीपन अच्छा स्वभाव नहीं है। इस तरह

विश्वासके सम्बन्धमें परस्पर विरोधी बातें है । इस कारण व्यापार–धंदे-वालोंको विश्वासके सम्बन्धमें अपना कैसा व्यवहार रखना चाहिए इसका ठीक-ठीक निर्णय कर देना अत्यन्त कठिन है । तथापि यहाँपर हम कुछ नियम लिखते है । ये नियम अनुभवी व्यापारियोंके स्थिर किये हुए हैं ।

(१) व्यापारमें किसीका विश्वास नही करना चाहिए ।

(२) अनुभवकी अनुकूलता हो तो थोड़ा-बहुत विश्वास करना चाहिए, अन्यथा नहीं ।

(३) विश्वासघात करनेवालेको हम अच्छी सजा दे सकेंगे ऐसी पूरी-पूरी खातरी हो तो थोड़ा बहुत विश्वास करना चाहिए ।

(४) ऐसे मनुष्यपर थोड़ा बहुत विश्वास करना चाहिए कि जो निजका मनुष्य है और विश्वासघात करे तो भी उससे बैर लेनेकी हमें इच्छा न हो ।

(५) जिसके साथ बहुत पुराने व्यवहारसे अच्छा अनुभव होगया हो उसका थोड़ा बहुत विश्वास करना चाहिए ।

(६) जिसके विषयमे हमारे अन्तःकरणमे कल्याणबुद्धि हो और जो निरपेक्ष हो, उसका विश्वास करनेमे कुछ चिन्ताकी बात नही है ।

(७) जबतक अनुभवसे पूरा-पूरा विश्वास न हो जाय उस समय तक प्रत्येक मनुष्यको पूर्ण विश्वासपात्र न मान कर, व्यवहार करना ठीक है ।

(८) यदि हम सच्चे अन्तःकरणसे बिना किसी प्रकारकी लालचके विश्वास रक्खेंगे तो इस भलाईका बदला हमे भलाईमें मिले बिना नही रह सकता ।

(९) ऐसा भी कोई-कोई प्रतिपादन करते है कि अन्तःकरणमें विश्वास न रख मुँहसे विश्वास करना–दिखलाना–दूसरोंको ऐसा ही जँचा देना यह एक प्रकारकी व्यापार-चतुरता है ।

जो हो हमारा कहना यह है कि विश्वासके संबन्धमें ठीक-ठीक नियम नहीं दिये जा सकते । विश्वासके सम्बन्धमें खूब सावधानी रखना उचित है । विश्वास कर ठगानेकी अपेक्षा पहलेसे ही विश्वास करनेमें सावधान रहना योग्य है ।

बीमा ।

व्यापारमें भाँति भाँतिकी जोखिमें होती है । उससे कभी कभी व्यापारीको बड़ी हानि पहुँचती है और वह कंगाल हो जाता है । आग लग जाना, माल डूब जाना, आदि ऐसी जोखिमें है कि जिनका कभी किसीको खयाल भी नही होता । व्यापारी इन जोखिमोंसे बीमेके द्वारा बच सकता है । बीमेकी मुख्य पद्धतियाँ तीन है । आगका बीमा, माल डूबनेका बीमा और मनुष्यकी जिन्दगीका बीमा । नुकसानका उत्तरदायित्व अपने सिरपर लेनेका नाम ही बीमा लेना है । दूकानमे या भडारमें भरे हुए मालमें आग लग जावे और इससे जो हानि हो उस हानिको भर देनेकी जिम्मेदारी बीमा कपनीको उठानी पड़ती है । इसी तरह जलमग्न हो जानेवाले मालकी कीमत देनेकी जिम्मेवारी बीमा कपनीको लेनी पड़ती है । ऐसी कंपनियोंकी रचना और व्यवहार चलानेकी पद्धति बहुत व्यवस्थित और तुरंत विश्वास दिलानेवाली होती है । सम्मिलित पूँजीसे स्थापित और सरकारसे रजिस्ट-रीकी हुई कंपनियाँ ही बीमा लेनेका काम करती है । पहले हिस्सेदारोंके पाससे थोड़ी थोडी पूँजी इकट्ठी कर नियमित कंपनी कायम की जाती है । फिर जितनी रकमके मालका बीमा किया जाता है उस पर वार्षिक फी सैकडा कुछ कमीशन लिया जाता है । जिस साल बीमा किया गया हो उस साल बीमेकी वस्तुको कुछ नुकसान न हुआ हो तो उस साल कमी-शनमे ली हुई रकम कंपनीको मुनाफेमें रह जाती है । इस तरह बहुतसी रकमें मिलकर बहुत पूँजी इकट्ठी हो जाती है । कभी किसीको नुकसानभर

देना पड़े तो इसी पूँजीसे देते है । कल्पना कीजिए कि पी फ्रेंड एंड को एक बीमा कम्पनी है। उसने १००० भडारोंका बीमा किया है। इन भडारोंमें १००००००) दस लाख रुपयेका माल है। कंपनी १) रुपये सैकड़ा वार्षिक कमीशनपर बीमा करती है। उसे इन भडारोंसे १००००) दस हजार रुपये वार्षिक मिलते है। अब विचार कीजिए कि हरसाल आग तो लगती ही नही और लगे भी तो एक-दो भडारोंमें, ऐसी सूरतमें जितने वर्ष आग न लगेगी कपनीको १००००) वार्षिक बचते रहेंगे और इसकी पूँजी इकट्ठी होती रहेगी । कल्पना कीजिए कि दस वर्ष तक आग न लगी और कपनीके पास १००००००) दस लाख रुपया इकट्ठा होगया । यदि अब किसी भडारमें आग लगी और माल जल गया तो इस सूरतमें कपनी १०००) रुपया उसे दे देगी । यह रुपया देना उसे कुछ भी न अखरेगा और दूकानदार कंगाल होनेसे बचेगा । दूकानदारोंको भी इसमें कुछ नुकसान नही है । उन्हे साल भरमें १०) रुपये देना पडता है जो भारी नही पडता और जोखिमसे बचे रहते हैं। इस तरह बीमा करनेकी पद्धति बड़ी उपयोगी और लाभकारी है ।

आगके बीमेकी तरह ही जलमार्गमें सही-सलामतीका बीमा, जिन्दगीका बीमा, अकस्मातका बीमा और नौकरकी ईमानदारी वगैरहका बीमा होता है। ये भाँति-भाँतिक बीमेकी पद्धतियाँ अब चल रही हैं । पेशवाईके समयमें हमारे देशमें चोरी डकैती, लूटखसोट, दूसरे राज्यकी जप्ती आदिका व्यापारियोंमें बीमा होता था। आजकल अँगरेजी राज्यमें बीमेका पूर्ण विकास और प्रचार हुआ है। व्यापार भी बेहद फैल गया है।

नैसर्गिक उपद्रवोंसे होनेवाले नुकसानको भरलेनेके लिए व्यवस्थित और कौशलपूर्ण बीमा-पद्धतिसे लाभ उठानेमें कोई चतुर व्यापारी उपेक्षा न करेगा । हमारे देशमें प्रत्येक तरहका बीमा लेनेवाली विदे-

शियोंकी कंपनियाँ हैं। देशी कंपनियाँ भी खुली है, यह प्रसन्नताकी बात है। इन कंपनियोंके चलानेका सरकारने कानून पास किया है।

यहाँ पर परदेशियोंकी कई कंपनियाँ है। उनके हाथमें देशकी बड़ी रकम है। यह रकम हमारी-भारतवासियोंकी साम्पत्तिक स्थितिको ठीक करनेके उपयोगमें नहीं आती। यह बात अर्थशास्त्र या टका पैदा करनेवाले शास्त्रकी दृष्टिसे बड़ी हानिकी है। यह सच है कि ये कंपनियाँ व्यापारीके नुकसानको भर देती है परन्तु वे अपनी गाँठकी पूँजीसे तो नुकसान भरती नही, नुकसान भरती है वसूल होकर इकट्ठी हुई रकममेंसे और बाकी रकमसे अपने मन-माने तौर पर लाभ उठाती है। यदि यह बीमेका काम देशी कंपनियोंमें हो तो व्यापारीको नुकसान न हो और देशी कंपनी-की पूँजी देशी उद्योग-धंदोंके विकासमे ही लगे। भारतमें अनेक देशी कपनियाँ भी हो गई है। जैसे बम्बईकी इंडियन लाइफ इंशोरेंस कम्पनी आदि। सबसे पहले भारतमें १८२९ ई में मद्रासमें बीमा कम्पनी खुली और फिर अन्यान्य प्रान्तोंमें भी।

व्यापारी ज्ञानके साधन।

व्यापार अत्यन्त कठिन शास्त्र है-व्यापार बड़ी भारी कला है-व्यापारका महत्त्व बहुत ही बड़ा है-व्यापार सारे जगतके व्यवहारमें व्याप्त है। बड़े बडे राज्योंका महत्त्व व्यापार पर प्रतिष्ठित है। राष्ट्रीय-सुख और राष्ट्रीय-सम्पत्तिका आधार व्यापार ही है। ऐसे व्यापा-रका ज्ञान कहाँसे मिलेगा-उसे सम्पादन करनेके लिए कौन-कौनसे साधनोंकी आवश्यकता है, इत्यादि प्रश्न ऐसी सूरतमें अपने आप चित्तमें उठ खड़े होते है। यही कारण है कि हम यहाँ पर इस विषयका थोड़ा बहुत विचार करना आवश्यक समझते है।

व्यापारकी प्रधान पाठशाला अनुभव है। इस पाठशालामें व्यापारका बहुत ही उत्तम ज्ञान मिल सकता है। इस पाठशालामें सीखे बिना व्यापारी-ज्ञान होना अशक्य है। उम्मीद्वारीमें रह व्यवसाय सीखे बिना व्यापारी ज्ञान सम्पादन करनेकी आशा करना व्यर्थ है। व्यापार करनेसे ही व्यापारकी खूबियाँ समझ पड़ती है। धंदेका ज्ञान धंदा ही देता है। अनुभव करनेमें जो हानि होती है वही गुरुदक्षिणा है। धंदेको शुरू करना, उसका अनुभव लेना, अनुभव प्राप्त करते हुए विचार करना, अनुभवसे तत्त्व निश्चय करना और जितनी हो सके जानकारी हासिल करना यही व्यापारी-ज्ञान प्राप्त करनेका मुख्य मार्ग है। व्यापारी ज्ञान पाने और सम्पादन करनेका प्रथम साधन स्वयं व्यापार करना है। व्यापारी-शिक्षा पानेकी मुख्य पाठशाला व्यापारीकी दुकानें ही है।

व्यापारी ज्ञानके साथ अर्थशास्त्र (धनोत्पादक शास्त्र) और गणित-शास्त्रके व्यवस्थित रीतिसे किये हुए अध्ययनका भी बड़ा भारी सम्बन्ध है। इनका अध्ययन तात्त्विक दृष्टिसे किया जाना चाहिए। अर्थशास्त्रमे पैसा-सिक्का-नाणा सम्बन्धी सारी बातोंका-सारे व्यवहारोंका अच्छी तरह विचार किया जाता है। जिसमें व्यावहारिक दृष्टिसे अर्थका विचार किया जाय उसे धनोत्पादकशास्त्र-टके कमानेका शास्त्र कहते है। व्यापारियोंको अर्थशास्त्रके ज्ञानकी पग पग पर आवश्यकता पड़ती है। अर्थ-शास्त्रके सिद्धान्तसे व्यापारीको एक पग भी नही हटना चाहिए। सच्चा व्यापारी हट ही नहीं सकता। अर्थशास्त्रको व्यापार-शास्त्र कह दें तो भी अनुचित नही है। विशेष क्या कहे अर्थशास्त्र व्यापारियोंके लिए भगवद्गीता है-भागवत है-वेद है-तत्त्वार्थसूत्र है-कुरान है-पुराण है-इंजील है-सर्वस्व है।

व्यापारीको इस बातके जाननेकी बड़ी आवश्यकता है कि कहाँ पर-कितना कौनसा माल पैदा होता है ? कहाँ पर कितने मनुष्य है ?

कौन सा माल तेज रहेगा–कौनसा मन्दा रहेगा, इत्यादि बातें अङ्कानुमानशास्त्र से जानी जाती हैं । दुनियोंमें क्या उलट फेर हो रहे हैं सो भी व्यापारीको जानना चाहिए । खेती सम्बन्धी ज्ञान–कितना नाज पैदा हुआ, कितना माल आया और कितना रवाना हुआ इत्यादि विषयोंकी रिपोर्ट व्यापारीको पढ़नी चाहिए । जिसे व्यापारीज्ञान सम्पादन करनेकी इच्छा हो उसे चाहिए कि वह व्यापार, कृषि आदिसे संबध रखनेवाली रिपोर्टें और समाचारपत्र पढ़ता रहे ।

व्यापारी-सभायें व्यापार सम्बन्धी जानकारीको इकट्ठा कर रखती है । विदेशी व्यापारी वकील वगैरह अपनी जानकारीकी रिपोर्टें प्रतिवर्ष प्रकाशित करते है । व्यापार–उद्योग–धंदेके सम्बन्धमे निरतर चर्चा करनेवाले समाचारपत्र, मासिकपत्र और वार्षिक विवरण आदि प्रकट होते रहते है । व्यापारी विषयके मुख्य-मुख्य ग्रन्थ भी छपते रहते है । इन सबका परिशीलन करना चाहिए । व्यापारी-ज्ञान सपादन करनेके ये मुख्य साधन है ।

व्यापारी ज्ञानकी शिक्षा देनेका व्यवस्थित साधन यही है कि व्यापार सम्बन्धी प्राथमिक और उच्च विद्यालयोंमे शिक्षा ग्रहण करें । और-और देशोंमे ऐसे बहुतसे विद्यालय है । हमारी सरकारका भी इस ओर ध्यान गया है–उसने एक कालेज खोला है । इससे भविष्यतमे लाभ होगा ही परन्तु वास्तवमें लाभ उसी समय होगा जब देशी विद्यार्थी देशी भाषाके द्वारा शिक्षित होंगे और भाषाज्ञानकी दृष्टिसे अन्यान्य भाषाओंको पढ़कर लाभ उठावेंगे । व्यापारी–ज्ञान फैलनेके लिए आवश्यक है कि समाचारपत्र, मासिक पुस्तक, वार्षिक विवरण, ग्रन्थ आदि देशी भाषामें खूब प्रचलित किये जावें । किन्तु खेद है कि ऐसा नही होता । और भी एक बात है । हमारे देशके जो व्यापारी है, जो अनुभवी हैं उन्हें ठीक व्यवस्थासे लिखना नहीं आता और जो लिख सकते हैं उनके पास

इस विषयका अनुभव नहीं है । हमारे व्यापारियोका कर्तव्य हैं कि वे अपना अनुभव प्रकट करें । इससे इस विषयके विद्यार्थियोंको बड़ा लाभ होगा ।

अंकानुमानशास्त्र–तेजी मंदीका ज्ञान ।

संख्याओंका विचार कर जो अनुमान किया जाय वह अंकानुमान-शास्त्र है । यह एक स्वतन्त्र शास्त्र है । व्यापारमें इसका बड़ा उपयोग होता है । व्यापारका प्रथम और मुख्य आधार-स्तम्भ तेजी–मन्दी-का ज्ञान है । कौनसी वस्तु कब और क्यो तेज या मन्द हो जायगी, एकदम खप जायगी या धीरे धीरे खपेगी, इत्यादि बातोका जानना व्यापारमे अत्यन्त आवश्यक है । व्यापारी ज्ञानमें तेजी मन्दीका ज्ञान होना बडे ही महत्त्वकी बात हैं । यह बात सम्भव है या अस-म्भव–यह बात साध्य है या असाध्य–इस बातका निश्चय करनेकी जिसमें शक्ति हो–जो अङ्कानुमानशास्त्रम प्रवीण हो उसे तुरंत तेजी-मन्दीका ज्ञान हो जाता है । जिसे तेजी-मन्दी शीघ्र समझ पड़ती है वह व्यापार-मे प्रवीण कहा जाता है और वही उससे लाभ उठा सकता है । व्यापारीका मुख्य कर्तव्य हम पहले ही बतला चुके है कि वह सस्ते भावमे खरीदे और मँहगेम बचे । अमुक माल कब और कैसे अवसर पर सस्ता होता है इसकी जानकारी होनेसे व्यापारी सस्तेके समयमें उस मालको खरीद लेगा और मँहगाईके ज्ञानसे तेजीके समय बेच सकेगा । जिस ज्ञानको अगरेजीमे—Science of Possib lities of Probab ities—साध्यासाध्यताका ज्ञान–हो सकने न हो सकनेका ज्ञान कहते है व्यापारीको इसकी बडी ही आवश्यकता है । "ऐसी स्थिति मे इसका परिणाम ऐसा होना चाहिए । ऐसी स्थितिमें अमुक बात होना सम्भव है–अमुक असम्भव है," इस प्रकारके अनुमान कर निर्णय

करनेकी कलाको ही शक्याशक्यता और साध्यासाध्यताका शास्त्र कहते हैं। अङ्कानुमान शास्त्रसे यह सब जान पड़ता है कि किस-किस तरहके कहाँ-कहाँ कितने-कितने कारखाने हैं, उनमें कितनी-कितनी तनख्वाहके कितने-कितने नौकर हैं, वहाँसे किस-किस तरहका कौनसा—कौनसा—कितना-कितना माल रोज निकलता है, कहाँपर कितना कच्चा माल तैयार होता है, कौनसा अनाज किस प्रान्तमें कितना बोया गया और कितना पैदा हुआ, किस प्रान्तमें कितने मनुष्य है—वहाँपर किस-किस मालकी कितनी खपती होती है इत्यादि। व्यापारी इस प्रकारके ज्ञानसे अनुमान-द्वारा तेजी-मंदीका निश्चय कर सकता है। इस शास्त्रमें सख्याके द्वारा निर्णय होता है, अतएव इसका नाम अङ्कानुमानशास्त्र है। संख्या द्वारा निर्णय होनेपर इस बातकी आवश्यकता पड़ती है कि अमुक बात साध्य है या नहीं, इसका निश्चय शक्याशक्यता और साध्यासाध्यताके शास्त्र-द्वारा होता है।

अङ्कानुमान शास्त्र और शक्याशक्यता-साध्यसाध्यताके शास्त्रका आपसमें सम्बन्ध है। इन दोनों शास्त्रोका अच्छा ज्ञान हो या होनेकी अनुकूलता हो तो तेजी-मन्दीकी अटकल अच्छी तरह लगाई जासकती है। तेजी-मन्दीक अटकलका ज्ञान हो जानेपर व्यापार करनेकी सफल पद्धतिको मुकर्रर कर लेनेमें कठिनाई नही पड़ती। इस लिए आवश्यक है कि व्यापार करनेकी जिसे इच्छा हो वह इन दोनों शास्त्रोंका ज्ञान अवश्य सम्पादन करे। अङ्कानुमानके ज्ञान सम्पादन करनेके लिए सरकारकी ओरसे प्रकाशित हुई पुस्तकें और रिपोर्टोंको पढ़ना चाहिए। क्या ही अच्छा हो यदि ये रिपोर्टें देशीभाषामें प्रकाशितकी जाया करें, या कोई सज्जन या ग्रन्थ-प्रकाशक मंडली ही इन सब विषयोंकी पुस्तकें, रिपोर्टें या वार्षिक विवरण निकालें।

अर्थशास्त्रके अध्ययनकी आवश्यकता ।

यहाँपर अर्थशास्त्रसे मतलब धन-विज्ञानसे–सम्पत्ति-शास्त्रसे है । इस शास्त्रका विषय धन-द्रव्य-सम्पत्ति-माल-पैसाका है । व्यापारका मुख्य प्राण पूँजी है । व्यापारीको उसकी अच्छी जानकारी होना चाहिए । अर्थशास्त्रका अच्छा ज्ञान व्यापारमें प्रवीणता सम्पादन करनेका एक प्रधान साधन है । अर्थशास्त्रमें व्यापार-तत्त्वका बहुत कुछ विवेचन होता है । व्यापारियोंको अर्थशास्त्रसे अज्ञान न रहना चाहिए । हम जिस उद्योग-धंदेको करें उसका बारीक-से-बारीक ज्ञान हमें होना चाहिए । व्यापार और अर्थशास्त्रका बडा ही निकटका सम्बन्ध है । प्रत्येक व्यापारीको अर्थशास्त्र अवश्य पढ़ना चाहिए ।

अर्थशास्त्रमे उत्पत्ति, बदलना और बॉटना इन तीन बातोंका खूब विवेचन होता है । माल तैयार करनेको उत्पत्ति, उसे किसी चीजके एवजमें देनेको बदलना और पैदा हुए मालमें परिश्रमके अनुकुल पाती करनेको बॉटना कहते है । अर्थशास्त्रके ये तीनों मुख्य विभाग है, इसीसे इस शास्त्रका सारा सम्बन्ध व्यापारके साथ आ मिलता है । अर्थशास्त्रके उत्पत्ति नामक विभागमें जमीन, मजदूरी और पूँजीका विचार होता है । मजदूरी और पूँजीके बिना जमीन सजला सुफला और शस्य-श्यामला नही हो सकती । जमीन, मजदूरी और पूँजी इन तीनोंके योगसे ही मनुष्यके निर्वाह होनेकी चीजें तैयार होती हैं । इन तीनोंके योग हुए बिना कोई वस्तु नही पैदा हो सकती । अतएव धनोत्पत्तिके प्रकरणमे इन तीनोंका विचार होना ही चाहिए । इन तीनोंका यथार्थ विवेचन करनेमें और–और बहुतसी बातोंका समावेश होता है । पूँजीके साथ ही साख, व्याज, आदि अनेक बातोंका विचार मनमें आ खड़ा होता है । यही हाल मजदूरी और जमीनका है ।

अतएव धनोत्पादक सारी बातोंका अच्छी तरह ज्ञान होनेके लिए अर्थ-शास्त्रका अच्छा ज्ञान होना चाहिए।

बदला.—यह व्यापार वृक्षका मूल बीज है। इस विभागमें देशके आने और जानेवाले मालका विचार और मालके अदला-बदला करनेका तात्त्विक विवेचन रहता है।

बॉटना.—इस प्रकरणमे श्रमविभागका विचार होता है। हमारे व्यापारी इसी श्रम-विभागके व्यवसायमें ही लगे रहते है। वे इस देशका माल उस देशमें और उस देशका इस देशमें खपाते रहते है। वे केवल इसी पद्धतिको जानते है। इस प्रकरणमें खपती और संग्रहका विवेचन रहता है। अप्रतिबद्ध-व्यापार और प्रतिबद्ध-व्यापारका भी इसी भागमें विवेचन किया जाता है। इस विषयके गहन और विस्तृत ज्ञानकी व्यापारियोंको बडी आवश्यकता है।

अर्थशास्त्र सम्बन्धी इस थोड़ीसी बातके कहनेसे हमारे व्यापारियोंको अर्थशास्त्र पढनेकी लालसा उत्पन्न हुई होगी। बिना पढे भी होशियार व्यापारियोको अनुभव और अनुभवसे पैदा हुए ज्ञानके योगसे थोड़ा बहुत काम चलाने योग्य अर्थशास्त्रका ज्ञान हो जाता है। तर्कशास्त्रसे उत्तम रीतिसे वाद-विवाद करना आता है, परन्तु कई एक मनुष्य ऐसे भी होते है जो विना तर्कशास्त्र पढे भी उत्तम रीतिसे वादविवाद कर सकते है। इसी तरह अर्थशास्त्र न पढकर भी कई एक सज्जन बड़े बडे व्यापार करते है। ऐसा होने पर भी हम यह नही कह सकते कि इस शास्त्र-के पढनेकी आवश्यकता नही है। अर्थशास्त्र पढ़े बिना जाना ही नहीं जा सकता कि इस शास्त्रका व्यापार-व्यवसायमें कितना उपयोग है। अर्थशास्त्र सफलताकी कुंजी है। इस शास्त्रकी महिमा अपार है।

जकात और व्यापारतत्त्व।

जिसके हाथमें सारी राजकीयसत्ता हो ऐसे राजा या सभाका कर्तव्य है कि वह अपने देशके व्यापार–उद्योग-धंदोंकी रक्षा और वृद्धि करे। प्रजाकी रक्षा और प्रजाकी पेट-पूजाके लिए उद्योग-धंदोंकी वृद्धि करना राजाके हाथमें होता है। कर लेनेका उद्देश्य केवल कर लेना ही नही है–जकातका उद्देश्य रुपये जमा करना ही नहीं है देशके व्यापार धंदेकी रक्षा करना भी है। कर दो प्रकारके होते हैं प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष। बाजारमें आते हुए मालपर सैकडेसे या मालके वजनपर कर होता है। परन्तु वह भारी नहीं जान पड़ता। यद्यपि इसका सारी दुनियापर–माल खरीदनेवालेपर–ही असर पड़ता है परन्तु उन्हे नही अखरता। इस तरहके करको अप्रत्यक्ष या परोक्ष कर कहते है। म्युनिसिपालिटीमें जो कर देना पडता है वह प्रत्यक्ष–कर है। आय कर, गृहकर आदि भी प्रत्यक्ष कर है।

व्यापारके विषयमें जो अप्रत्यक्ष कर देना पडता है उसीका नाम जकात है। जकात लेनेके कुछ मुख्य तत्व होते है। जकातके तत्त्वोंकी अलग अलग तीन प्रकारकी पद्धतियाँ होती है। अप्रतिबद्ध, प्रतिबद्ध, और यथायोग्य तीनो प्रकारकी परिपाटियाँ इस समय प्रचलित है। इन तीनों प्रकारकी प्रत्येक रीतिका सामान्य लक्षण बतलानेके पहले आवश्यक है कि हम यहाँपर इस बातका वर्णन करें कि जकात क्यों लगाई जानी चाहिए? व्यापारसम्बन्धी जकात लगानेके मुख्य कारण चार है।

(१) अपने देशके उद्योग धंदेके साथ, अन्य देश या प्रान्तके रोजगार प्रतिस्पर्धा न कर सकें, अपने देशके उद्योग धंदेकी अवनति न हो, अपने देशके बने हुए मालसे विदेशका बना हुआ माल सस्ता आकर न बिक सके।

(२) देशका कच्चा माल परदेश जाकर देशके कारीगरोंका उद्योग नष्ट होने न पावे–कच्चे मालसे पक्के मालके बनानेका धंदा नष्ट न हो जावे।

(३) अनावश्यक और हानिकारक पदार्थोंकी न वृद्धि हो और न उन्हें उत्तेजन मिले ।

(४) देशका धन बाहरकी चीजें खरीदनेमे न उड़े-देशकी सम्पत्ति विदेशमें न जाने पावे । इन चार कारणोंमेसे किसी भी एकाध कारणसे व्यापार-रोजगार-धंदेपर जकात लगाई जाती है । जकातके इन तत्त्वोंसे व्यापारपद्धतिके तीन प्रकार उत्पन्न होते है । पहला प्रकार अप्रतिबद्ध है । देशका माल परदेश जानेमें और परदेशका माल देशमें आनेमे किसी प्रकारकी रोक टोक न हो-कुछ कर न हो, इसका नाम अप्रतिबद्ध व्यापार है । इग्लैंड और हिंदुस्थानकी सरकारने अप्रतिबद्ध नीतिको स्वीकार किया है । इस नीतिसे इग्लंडको बेहद लाभ हुआ है और आर्यावर्तको-गरीब हिन्दुस्थानको-बेहद नुकसान । इस नीतिसे भारत दिन दिन गरीब होता जाता है । इग्लंडके अर्थशास्त्री आदमास्मिथ वगैरहने प्रतिपादन किया है कि पहले पहले ऐसा भास होता है कि नुकसान हो रहा है परन्तु अप्रतिबद्ध व्यापारसे अन्तमे लाभ ही लाभ होता है । ठीक है ! परन्तु देशकी कैसी परिस्थितिमें इस नीतिसे लाभ हो सकता है यह विचार करने योग्य प्रश्न है । इस समय भारतका करोड़ो रुपयेका कच्चा माल विदेशमे जाता है और वहीं वहाँपर तैयार होकर-पक्कामाल बन वापस यहीं आखपता है ? कच्चे मालसे पक्का माल करनेमे जो श्रम-कर पारिश्रमक या कमाई की जाती है वह यहाँके श्रमजीवियोंकी कमाई विदेशी उड़ा लेते है । इतना ही नहीं पक्के मालको खरीदनेसे यहाँकी सम्पति उड़ी चली जा रही है और विदेशी यहींका धन खीच कर गुलछर्रे उड़ा रहे है । इस अप्रतिबद्ध व्यापारके कारण दूसरे देशोंके कारखाने यहाँ पर अच्छी तरह माल बेच सकते है, उन्हें काफी लाभ होता है और बेचारे यहाँके कारखानेवाले, कारीगर, मजदूर और संक्षेपमे सारे भारतवासियोंको धनहानि-बलहानि-जीवनहानि उठानी पड़ती है । मेरे विचारमे भारतवासियोंके लिए इस समय अप्र-

तिबद्ध व्यापारनीति अच्छी नहीं, इसका उपयोग यथासमय किया जाना चाहिए।

दूसरी व्यापारनीतिका नाम प्रतिबद्ध या विदेशी मालके आनेमें रुकावट डालने वाली पद्धति है। हमारे देशके उद्योगके साथ दूसरे देशोंके उद्योग स्पर्धा न कर सके इस लिए विदेशके आनेवाले मालपर भारी महसूल लगाया जाता है इस महसूलसे विदेशीमाल बहुत महँगा हो जाता है, इतना महँगा कि देशी मालके साथ नहीं ठहर सकता। इसी नीतिको प्रतिबद्ध-नीति कहते हैं।

तीसरी नीतिका नाम है यथायोग्य नीति। इसमें–'हरि कैसा ? जैसे-का तैसा'–वाली कहावत चरितार्थ होती है। जो राज्य हमारे साथ जैसा बर्ताव करे वैसा ही उसके साथ करना इस नीतिका उद्देश होता है। यदि हमारे देशका पक्का माल बेरोक–टोक किसी देशमें खपे तो हम भी उस देशका पक्का माल हमारे यहाँ बेरोक–टोक आनेदें, नहीं तो नहीं। यह नहीं कि हमारा माल–पक्का माल तो कहीं प्रवेश न करने पावे–बेरोक-टोक–बिना कर दिये—जाने न पावे और विदेशी मालसे हमारे बाजार भर जावें। अंगरेजीमें जिसे Fair trade कहते हैं उसे ही हमने यथायोग्य व्यापारके नामसे लिखा है।

जकातके लिए व्यापारपद्धतिके इन तत्त्वोंका विचार करना काफी है। इन तत्त्वोंके सिवाय भी जकात ली जाती है सड़क पुल वगैरहसे मालके आने जानेसे आसानी होती है। इनके खर्चके लिए भी जकात ली जाती है। सरकारी खर्चके लिए भी कुछ जकातसे आमदनी–कर लिया जाता है और शहरके सुधारके लिए भी जकात लगाई जाती है। जकात –महसूल लगानेका कारण ऊपर कहे हुए तत्त्वोंमें समाविष्ट हो जाता है। भारतसरकारका प्रधान कर्तव्य या मुख्यधर्म है कि वह जकात-तत्त्वोंको इस तरह काममें लावे कि यहाँके सारे उद्योग-धंदे खिल उठें।

मुसाफिरीसे लाभ।

व्यापारीको इस बातके अच्छीतरह जाननेकी बड़ी ही आवश्यकता है कि किस-किस देशमें, किस-किस प्रान्तमें और कौन-कौनसे बाजारमें क्या क्या चीजें पैदा होती हैं और क्या-क्या खपता है। लोगोंके रीतिरिवाज कैसे है? मेले-ठेले कहाँ-कहाँ होते हैं बार-त्योहार कौन कौनसे हैं? लोकरुचि कैसी है? अन्य व्यापारी कैसे है और क्या व्यापार करते है? कौनसी वस्तु कहाँपर कितनी और कैसी पैदा होती है? इत्यादि आवश्यक बातोंकी व्यापारीको बारीकसे-बारीक जानकारी होनी चाहिए। मार्ग, सड़क, जकातके नाके, नदी, नाले, पुल आदिकी जानकारीके साथ यह सारा ज्ञान होना चाहिए कि एक स्थानसे दूसरे स्थानको मालके पहुँचाने-करनेमें कितना खर्च होगा, और कितना समय लगेगा। ये सारी बाते आँखोंसे देश विदेशको देखनेसे अच्छीतरह ज्ञात होसकती है। कौनसी जगह, किससमय, कौनसी वस्तु तैयार होती हैं और उन्हें खरीदनेका समय कौनसा है, इसका सच्चा ज्ञान स्वयं अपनी आँखोंसे देश-देशान्तर देखनेसे होसकता है। व्यापारीका यह मुख्य कर्तव्य है कि वह क्रय-विक्रय, संग्रह-खपती और ग्राहक-आड़तिया वगैरहका अच्छा ज्ञान सम्पादन करे। इसका प्रधान और सुगम साधन मुसाफिरी है। हमारी जितनी ज्यादा जान-पहचान होगी उतनी ही हम व्यापारमे वृद्धि कर सकेंगे। जान-पहचानपर शुद्धव्यवहार और उत्तम परिपाटीका बहुत कुछ आधार है। यह जान-पहचान मुसाफिरीसे बढ़ती है।

मनुष्यस्वभावको परखना यह एक महत्त्वकी कला और व्यापार-चातुर्य्य है। जो चाहता हो कि मुझे यह कला आवे उसे चाहिए कि वह जितना होसके बहुतसे मनुष्योंकी संगति करे। लोक-समुदायको सूक्ष्म रीतिसे देखे-भाले बिना यह ज्ञान नहीं पैदा होसकता। मुसाफिरी करनेसे

लोकसमूहको देखनेका प्रसंग मिलता है। मुसाफिरीसे अनेक प्रकारके भाँति-भाँतिके अनुभव होते हैं। ज्ञानदृष्टि बढ़ती है, भिन्न-भिन्न स्वभावके मनुष्योंसे मिलना-जुलना होता है और शक्याशक्यता—साध्यासाध्यताका अनुमान करनेकी शक्ति आजाती है। मुसाफिरीसे व्यापारी अटकल लगानेकी शक्ति बढ़ती है।

मुसाफिरी करना—पर्यटन करना स्वय एक प्रकारका व्यापार ही है। अपना माल गाँव-परगाँव या देश-परदेशमें खपानेका काम मुसाफिरीसे अच्छा होता है। बाजारमें दूकान होती है। फेरीवाले दूकानसे माल ले आते है और घर-घर फिरकर मालको खपा आते है। इसीतरह जगह-जगहपर अपने मालको खपा आनेमें मुसाफिरीके समान दूसरा कोई उपाय नही है। इसतरह विचार करनेपर जान पड़ेगा कि जिसे व्यापारी ज्ञानसपादन करना हो उसे पर्यटन करना चाहिए—मुसाफिरी करना चाहिए। हमारे देशमें तो यह ज्ञान पहलेसे ही प्रचलित है कि व्यापारीको मुसाफिरीमें ही रहना चाहिए। हम यह नही कहते कि व्यापारीको बारों महीने चक्कर लगाते रहना चाहिए और न हम यही कहते है कि एकदम मुसाफिरी करते ही रहनेसे कार्यसिद्धि होती है; किन्तु हमारे कहनेका तात्पर्य इतना ही है कि व्यापारीको वर्षभरमें कमसे-कम तीन-चार महीने पर्यटन अवश्य करना चाहिए। पर्यटनमें गाँठके पैसे खोना ठीक नहीं—मुसाफिरीका खर्च व्यापारीको बाला-बाला निकालना चाहिए। मुसाफिरी करते समय किसी वस्तुके क्रयविक्रय द्वारा उससे अपना सफरखर्च—पर्यटन-व्यय निकाल लेना चाहिए। जो व्यापारी जितनी ज्यादा सफर करता है वह उतना ही ज्यादा होशियार होता है, चतुर होता है और चाणाक्ष (किसीके पेंचमें न आनेवाला, समझदार) होता है। जो जितनी मुसाफिरी करता है वह व्यापारमें उतना ही ज्यादा बढ़ा हुआ होता है। संक्षेपमें हमारे कहनेका भाव यही है कि पर्यटन व्यापारीको अत्यत लाभ पहुँचानेवाली वस्तु है। पर्यटन व्यापारीका

जीता-जागता और फलदाता विज्ञापन है। मुसाफिरी व्यापारी ज्ञानका विद्यालय है। पर्यटन व्यापार-चातुर्य सिखलानेवाला उत्तम-से-उत्तम अध्यापक है। मुसाफिरी करना व्यापारीका कर्तव्य है। समझदार व्यापारीको योग्य है कि वह अपने व्यापारको विकसित करनेके लिए प्रवास किये बिना-मुसाफिरी किये बिना-न रहे!

व्यापारके सुभीते।

जबतक सुभीतोंकी बहुतायत न हो तबतक व्यापारकी वृद्धि होना असम्भव है। वर्तमान समय व्यापारकी सुविधाओंके अनुकूल है। वर्तमान समयको यदि व्यापारयुग कहें तो भी अनुचित नहीं है। शान्तिके समयमें व्यापारवृद्धि ही प्रधान कर्तव्य जान पडता है। राजा और प्रजाका ध्यान व्यापार-वृद्धिकी ओर लगा हुआ है। हमारा यह कर्तव्य है कि हम व्यापारवृद्धिके साधनोंको बढ़ावे। व्यापारवृद्धिसे देशके महत्त्वकी तुलना की जाती है और इसीमें देशका वैभव समाया होता है। देशका व्यापार बढ़ना देशके सौभाग्यका चिह्न है। पहले सबका ध्यान अस्त्रशस्त्रकी ओर था और अब व्यापारकी ओर है। लार्ड मेकालेने एक समय राजा-प्रतिनिधि-सभामें कहा था कि हमारी सत्ता हिंदुस्थानमें न रहे तो विशेष हानि नहीं, पर भारतका केवल व्यापार हमारे हाथमें रहना चाहिए। इस कथनसे मालूम होता है कि इंग्लेंडके बड़े बडे विद्वान् सार्वभौम-सत्तासे व्यापारको बड़ा और लाभदायक मानते है। सरकारके जितने सार्वजनिक और लोकोपयोगी कार्यालय है उन सबकी कार्यवाही व्यापारके अनुकूल साधन खडे करनेमे है। इस सभ्यता और शान्तिके समयमें राजकाज चलानेका अर्थ व्यापार वृद्धिके अनुकूल साधन खड़े करना ही है, ऐसा जान पड़ता है। भारतकी अँगरेज सरकार व्यापारी है। व्यापारके बलसे ही उसने इतना बडा राज्य सम्पादन किया

है । बहुतसे कार्यालय व्यापारवृद्धिके लिए ही बने हुए जान पड़ते है । डाकखानें, तारघर, इजीनियरी, रेल, पुल, सडक, यहीं क्यों, पुलिस विभाग तक व्यापारकी सुविधाओके लिए ही बने हुए जान पड़ते है । लोकनायक–समाजके अगुआ और राजपुरुषोकी सारी खटपट व्यापार-वृद्धिके लिए हो रही है । इस समय व्यापार वृद्धिके लिए क्या क्या सुविधायें है, इसका कुछ विचार यहाँ करते है ।

डाकखानें और तारघर.—डाकखाना और तारघर ये दोनों बड़े ही उपयोगी है । सस्ताईमें खरीदना और महँगाईमें बेचना व्यापारका मूल-तत्त्व हैं । डाकखानेके द्वारा, एक पैसे या दो पैसेके खर्चसे, कोनसी वस्तु कहाँपर कितने मोलमें मिलती है यह सहजमे जाना जा सकता है । सारे भारतवर्षमे सैकडो कोसके समाचार दो पैसेमे मँगाये जासकते है । पहिले ऐसी सुविधा न थी । तारके द्वारा सारे संसारके समाचार जाने जासकते हैं । डाकखानेकी मार्फत मालके नमूने वगैरह मँगाये जास-कते है और रुपये आदि भेजे जासकते है । डाकखाने और तारघर व्यापारकी सुविधाओंके लिए ईश्वरीय आशीर्वादके बराबर हैं ।

रेल —डाकखाने और तारघरके द्वारा कोनसा माल कहाँपर सस्ता मिलेगा, यह तुरत जान पडता है और उस मालको मँगवानेका साधन रेल है । चाहे जितना माल, चाहे जितनी दूरसे रेलके द्वारा एकदम मँग-वाया जासकता है । रेलमे व्यापारियोंका बड़ा सुभीता होगया है । यह सुभीता सरकार और व्यापारी दोनोंने खडा किया है । रेलवेके नियम व्यापारियोंको बहुत कुछ मालूम होते है और विशेष विशेष नियम जानते रहना चाहिए ।

पुल सड़क:—इनमे भी बड़ा सुभीता व्यापारियोंको होता है । सरकार प्रतिवर्ष लाखोंके खर्चसे इन्हे तैयार करती है–सुधरवाती है । सडक, पुल, रेल, जहाज, डाकखाने, तारघर आदि सब व्यापारकी सुविधाके साधन है ।

पुलिसः—इसके द्वारा चोरी-डकेती वगैरहसे मालकी रक्षा होती है। यह भी व्यापारकी सुविधाका साधन है।

न्यायालयः—लेन-देनके व्यवहारमें बेईमानी न होने पावे—न्याय हो, इसके लिए अदालतें हैं। इन अदालतों—न्यायालयोंसे भी व्यापारमें सुगमता होती है। कोई विशेषतया बेईमानी नहीं कर पाते। इस तरह सरकारने व्यापारकी सुगमतायें की है। प्रजाने भी बैंक, दूकान, बीमा-कंपनी, व्यापारी मंडल, व्यापारी वकील, व्यापारी समाचारपत्र आदिकी सृष्टि कर व्यापारकी सुविधायें खड़ी की हैं। सरकारमें एक व्यापारी कार्यालय भी होता है। इसके द्वारा व्यापारसम्बन्धी जानकारियाँ प्रकट की जाती है। सरकारके विदेश खातेमें व्यापारी वकील भी रहते हैं; व्यापार-सम्बन्धी सुविधाओंकी रक्षा करना इनका काम है। व्यापारी विद्यालय, व्यापारी ग्रन्थ, व्यापारी व्याख्यान, वगैरहसे व्यापारसम्बन्धी ज्ञानका प्रसार किया जाता है, जिसके द्वारा व्यापारमें सुविधा होती है।

पत्रव्यवहार।

व्यापार-धंदेमें पत्रव्यवहारका काम बड़े ही महत्त्वका है। अलग-अलग गाँवोंके क्रय-विक्रय, भाव-ताव और नई पुरानी खबरोंके प्रतिदिन जाननेकी बडी भारी आवश्यकता है। पत्रके द्वारा ग्राहकोंकी माँग, उनकी दलील, और जो कुछ उन्हें उत्तर देना हो सो सब कुछ होता है। अपने मालकी इत्तिला और ग्राहकोंकी आवश्यकता आदि भी पत्रके द्वारा प्रगट होती है। इस तरह व्यापारमें कई कारणोंसे पत्र-व्यवहारकी आवश्यकता है। अतएव पत्र-व्यवहारका काम सदा व्यवस्थित नियमित और परिपूर्ण रीतिसे होना आवश्यक है। पत्र मिलते ही उसके मतलबको ध्यान रखकर जबाब लिखना चाहिए। आये हुए पत्रोंको व्यवस्थित रीतिसे रखना चाहिए, इस तरह कि कभी किसी

पत्रकी आवश्यकता आपड़े तो तुरंत ही खोज निकाला जासके । होशयार व्यापारी कभी इस विषयमें भूल नहीं करता । आये हुए पत्रोंका बिगतवार जवाब देना चाहिए । जिस रोज पत्र आवे उसी दिन उसका उत्तर देना, यही अच्छी परिपाटी है । आये हुए पत्रका उत्तर न देना असभ्यता है । हमारे घर आये हुए मनुष्यकी यदि हम आवभगत नही करते तो यह हमारी असभ्यता है । यही हाल पत्रका है । यदि हम पत्रका उत्तर नही देते तो असभ्यता तो है ही, परन्तु व्यापारके काममें नालायकी भी है । ज्यादा क्या कहें, पत्रोत्तर न देना बेरोजगार रहना है। जो मनुष्य यह चाहे कि हमें कोई असभ्य–नालायक–बेपरवा अनुद्योगी न समझे, उन्हें चाहिए कि वे आये हुए पत्रका तुरंत ही उत्तर दें । पत्रकी प्रत्येक बातका सोच–समझकर उत्तर देना चाहिए । पत्र लिखनेमे गड़बड़ न करना चाहिए, अक्षर साफ लिखने चाहिए, मतलब ठीक समझमें आवे ऐसी इबारत लिखना चाहिए । नाम धाम साफ लिखना चाहिए । अपना नाम धाम पत्र पर छपा रक्खा हो तो और भी ठीक है । अब ऐसे छपे हुए कागजोंपर लिखनेका रिवाज़ चल पड़ा है । व्यापारी लोगोंको इस परिपाटी पर अवश्य चलना चाहिए । इससे अपने मुँहसे कहे बिना लोगोंको हमारा पता मिल जाता है । व्यापारीका यह कर्त्तव्य है कि दुनियाको वह प्रकट कर दे कि उसके यहाँ अमुक–अमुक मालका व्यापार होता है । छपे हुए पोस्टकार्ड या कागजके व्यवहारसे यह बात होती है । क्योंकि इन पत्रोंपर व्यापारी, प्रिंटर, पब्लिशर, बेंकर, आदि शब्द छापकर अपने कामको प्रसिद्ध कर सकता है । यह सच है कि ऐसे काममें प्रारम्भ–प्रारम्भमें खर्च बढ़ता है, परन्तु अन्तमें लाभ हुए बिना नही रह सकता ।

अपने भेजे हुए आवश्यक पत्रोंकी नोंध रखना आवश्यक है । कभी कभी यह नोंध बड़ा काम देती है । इसलिए अपने भेजे हुए पत्र और उसके पतेकी नकल रखना व्यापारीको जरूरी है । ऐसी नकलें रखनेकी

तरकीब (बिना दूनी मिहनत हुए और विशेष खर्च हुए) निकल आई है। यह नकल फोटूके समान हूबहू होजाती है । कापींइंक (नकल होनेकी स्याही) से लिखनेसे उसकी नकल पतले कागजकी बही पर उतर आती है। पैंसिलसे लिखे हुए पत्रकी भी नकल रह सकती है। इसके लिए भी खास प्रकारका काला पतील कागज आता है । व्यापारियोंके लिए आवश्यक है कि वे अपने भेजे हुए पत्रोंकी नकल रक्खे बिना न रहें। पत्र-व्यवहारमे आलस्य रखना ठीक नहीं। जो पत्रव्यवहारमें कच्चा होता है उसके फँसनेके बहुत प्रसंग आते है। पत्रव्यवहारमें देरी करना—आलस्य करना यह सब अपने हाथसे अपना मोल घटाना है। अतएव पत्रव्यवहारमे सदा दक्ष रहना चाहिए।

पत्रव्यवहार करना घर बैठे संसारके साथ वार्तालाप करना है। जबानी बात-चीत करनेमें जितनी चतुराई रखना पड़ती है उससे विशेष चतुराई पत्रव्यवहारमे रखना चाहिए। धोलेपर काला करनेमें बड़ी सावधानीकी जरूरत है। हम पत्र-व्यवहारके आवश्यक-मुख्य मुख्य नियम यहाँपर लिख देते है। इनपर ध्यान रखना चाहिए:--

१ अपने यहाँ आये हुए पत्रपर आनेकी तारीख लिखकर उसकी नोंध करनी चाहिए।

२ जिस दिन पत्र आवे उसीदिन उसका उत्तर देना।

३ भेजे हुए और भेजे जानेवाले पत्रोंकी नोंध और नकल रखना।

४ पत्र साफ अक्षरोंमे खुलासेवार और तुरंत मतलब समझ पड़े ऐसा लिखना।

५ पत्रके नीचे सही साफ तौरपर करना और नामधाम स्पष्ट तौरसे लिखना, या छपवाना।

६ हमारे पत्रोंको हमारी इच्छाके बिना कोई कभी पढ न सके ऐसा प्रबन्ध कर रखना।

७ हमारे लिखे हुए पत्रोंकी नकल और आये हुए पत्र जब चाहें तब तुरत मिल जावें ऐसी तजवीज रखना।

८ पत्रमें व्यर्थ बातें न भरना, पूँछी हुई बातका उत्तर देना और अपना मतलब समझा देना।

९ पत्र पढ़ते ही यह विचार करना कि यह उत्तर देने योग्य है या नहीं और फिर वैसा ही बर्ताव करना।

१० पत्रकी भाषा सरल और स्पष्ट हो, पेचीदा न हो। व्यापारियोंको चाहिए कि इनके सिवाय अपनी परिस्थितिके अनुकूल सब नियमोंको काममें लाया करें।

अनुभव, अभिप्राय और सलाहके नियम।

व्यापारियोंके पालन करने योग्य सारे नियमोंको एक ही स्थान पर कह देना अत्यन्त ही कठिन है। तथापि हम यहाँ पर कुछ व्यापार-कार्यमें मार्ग दिखानेवाले मोटे मोटे नियमोंको लिखते है। व्यापार खरा व्यवहार है। व्यापारके नियमका उलंघन हुआ कि प्रायश्चित्त भोगना पड़ा। इससे आवश्यक है कि व्यापारके नियम धर्मके नियमोंकी तरह पालन किये जावें। धर्मोलंघनका फल कदाचित विलम्बसे भी भुगतना पड़े—भूलसे हुए कामकी माफी भी मिल जाय, परन्तु व्यापारकी भूल तत्काल प्रायश्चित्त भुगवाये बिना न रहेगी। व्यापारके नियमोलंघनमें माफी नहीं—तुरंत नकद्‌दंड होता है। वहाँ पर पश्चात्तापसे शुद्धि है यहाँपर नहीं—अन्य शास्त्रोंके नियम प्रकट है, परन्तु व्यापारके नियम गुप्त हैं; वे अनुभवसे ही जाने जाते हैं, कहीसे मुफ्तमें नहीं मिलते। कोई अनुभवी किसीको सैंत-मैंतमें व्यापारी सलाह नहीं देता—व्यापार मतलबसे भरी बात है। इसी गुप्त रखनेकी क्रियाके कारण हमारे प्राचीन व्यापारियोंका गुप्त नाम पड़ा है। यहाँ पर हम पूँजी, नामा

बर्ताव और व्यवहारसम्बन्धी कुछ नियम लिखेंगे जिनसे हमारे पढ़ने वालोंको व्यापारी सलाहका बहुत कुछ ज्ञान होगा।

१ पूँजीसम्बन्धी नियमः—

(१) इस बातको जहाँतक बन पड़े गुप्त रखना चाहिए कि हमारी पूँजी कितनी है, कहाँसे और किस तरह इकट्ठी की गई है।

(२) देनदार होकर व्यापार करनेवाला; झूठा, लुच्चा, ठग, कृतघ्न, खाऊ आदि दोषियोंके दोषोंका पात्र हुए बिना नहीं रहता।

(३) अपनी साखसे मनुष्यकी सत्ता दूसरोंकी पूँजी पर हो जाती है, इससे अपनी साख सदा समुज्ज्वल रखना चाहिए।

(४) साखसे ही सदा काम करनेवाला कभी-न-कभी अपनी साख खो बैठता है।

(५) साखका बाजारमें उपयोग करना जुआ खेलनेके समान है। साखसे ही काम चलानेवालेकी साख बिगड़े बिना नहीं रहती, इस लिए इसका उपयोग कभी कभी ही करना चाहिए।

(६) जबतक साख कभी कभी काममें लाई जाती है तब तक उसकी कीमत बहुत होती है। उससे बहुत काम लेनेमें उसकी कीमत कम हो जाती है।

(७) जो बात बातमें बिगडे और अभिमानी हो, ऐसे मनुष्यको साँझीदार न बनाना चाहिए।

(८) ज्ञान, पूँजी और परिश्रम इन तीनोंमे हिस्सेदारी होती है, परन्तु जो पूँजीवालेको महत्त्व नही देते उनकी हिस्सेदारी बहुत समय तक न चलेगी।

(९) पूँजीवाला हिस्सेदार हो तो वह जितना दूर रहनेवाला हो उतना ही अच्छा। पूँजीवाला हिस्सेदार धंदेसे जानकार हो तो बहुत अच्छा, अजानेके साथ मिलकर व्यापार करना दाँता-कच्च-कच करनेका और अपयश होनेका साधन है।

(१०) अनुभवहीन और छुपावट रखनेवाले पूँजीवालोंको हिस्से-दार न रखना चाहिए।

(११) साझेका व्यापार करनेके पहले खूब पक्का विचार करना चाहिए।

(१२) लोगोंके पाससे आनेवाली रकमपर विश्वास रखना धोकेसे खाली नहीं है। लोगोंके पाससे आनेवाली रकम पर विश्वास कर व्यापार करनेवाला व्यापारी कभी-न-कभी फँसे बिना नहीं रह सकता।

(१३) अपने देनेको खरा मानकर ठीक समयपर देना चाहिए और लेना खरा है सो ठीक समयपर आ ही जायगा—ऐसा भरोसा न रखना चाहिए।

(१४) यह बात छुपी हुई रखना बहुत ही कठिन है कि कर्ज कितना है और कब देना है। अतएव सबसे अच्छा तो यह है कि जहाँतक बन पड़े कर्ज न किया जाय। अपने माथेके कर्जका हाल दूसरोंको मालूम होने देना अपनी साखका गला घोंटना है—अपने हाथसे ही अपनी स्थिति ऐसी कर डालना है कि कोई अपना भरोसा न करे।

(१५) जिसका लेन-देन गुप्त न हो उसकी साख किसी गिन-तीमें नहीं रहती।

(१६) जिसके सिरपर कर्ज है समझना चाहिए कि वह व्यापारी अपनी इज्जत, आबरू, स्वतन्त्रता और सुख दुश्मनोंके हाथमें दे चुका।

(१७) देनदार व्यापारीका लाभ कमलपत्रके ऊपरके पानीके ऐसा अनिश्चित—चंचल है।

(१८) कर्ज व्यापारका क्षयरोग है और क्षयरोगकी उपेक्षा करना मौतको बुलाना है।

(१९) साखसे कर्ज लेकर, या हिस्सेदारीमें खूब नफा उठाना दुर्घट काम है। इस तरह लाभ उठाना भाग्यवानोंका चिह्न है।

(२०) व्यापारी धनवान् है या नहीं यह उसकी आयसे नहीं, बचतसे जाना जाता है।

(२१) दूसरेकी पूँजी और अपना ज्ञान इनके योगसे व्यापार करना व्यापारी कौशल है। यह पूँजी कर्ज न होना चाहिए। पूंजीवाला अपने लाभके विचारसे स्वयं दे, ऐसी होनी चाहिए।

(२२) जिसके पास पूँजी न हो ऐसे मनुष्यको चाहिए कि पहले नौकरी कर विश्वास जमावे, धरोहर रख द्रव्य सम्पादन करे और फिर स्वतन्त्र धदा करे। परन्तु यह ठीक नही है कि वह कर्जकर व्यापार चलाता हुआ अनुभवके फंदेमें फँसे।

(२३) साख, ज्ञान और नक्द पूँजी, इन तीनोंकी जिसके पास समान अनुकूलता न हो उसे अपनी जवाबदारीपर व्यापार न करना चाहिए। ऐसे मनुष्यको उचित है कि वह उम्मीदवारी, नौकरी और हिस्सेदारीकी श्रेणियोंपर क्रमश चढे। एकदम ऊपर न कूदे। ऊपर एकदम कदाचित चढ जाय और पीछा गिरे तो फिर चढ़नेकी कोशिश करना चाहिए।

२ नामा-बहीखाताः—

(१) व्यापारीको चाहिए कि वह रोज आय-व्यय लिखकर बाकी सिलक सँभाला करे।

(२) ऊँटपर चढकर झोंके खानेवाला और याद कर करके बही-खाता लिखनेवाला गिरे बिना न रहेगा।

(३) बही खातेको-नामेको रोज देखने भालनेवाला फायदा ही उठाता है।

(४) बही-खाता सरस्वती है-लक्ष्मी है। व्यापारके प्राण है-उन्हे सदा शुद्ध और स्वच्छ रखना चाहिए।

(५) पैसा हाथमे आये बिना जमा नही करना चाहिए और लिखे बिना देना न चाहिए।

(६) बही-खाते महीनेकी अन्तिम मितीतक रोजीना साफ लिखे रहना चाहिए।

(७) देना बहुत हो जानेसे बही खाता देखते आलस्य-झुंझलाहट होती है और ऐसा होना आखिरकार फजीता होना है।

(८) अपने बहीखाते किसीको व्यर्थ न दिखलाने चाहिए और प्रसग पडेपर वैसा करनेसे चूकना न चाहिए।

(९) बहीखाते सदा अपने ही हाथमें रखने चाहिए।

(१०) कहनेका मतलब यह है कि बहीखातोंको पवित्र रखनेमें सदा सावधान रहना चाहिए।

(११) यदि हम नामा रखना, या लिखना, न जानते हो तो यह काम हमें अपने अत्यन्त विश्वासपात्र मनुष्यसे कराना चाहिए, चाहे जसे किरायेके मनुष्यसे यह काम लेना ठीक नहीं।

३ बर्ताव–सदाचारः—

(१) मीठीबोली, शान्त स्वभाव और सहनशील प्रकृति य गुण व्यापारीके लिए आवश्यक है।

(२) 'नाहीं' का उत्तर देनेका ज्ञान सम्पादन करना व्यापारीके लिए आवश्यक है। बहुतसे व्यापारी ऐसे देखे गये है जो जबानसे 'हाँ, हाँ' करते है और काममें 'नहीं' प्रकट करते है। यह ठीक नहीं। इसका परिणाम पहलेसे 'नहीं' करनेकी अपेक्षा बहुत ज्यादा खराब होता है। पहलेमें 'नहीं' कर देनेमे लोगोंको बुरा नहीं लगता और स्वय भी कठिनाई नहीं उठानी पड़ती। पर यह काम कठिन है, इसे सीख रखना चाहिए।

(३) व्यापारीको बकबक न करना चाहिए और बोलनेकी अपेक्षा सुनना ज्यादा चाहिए। सच्चे व्यापारी ज्यादा बोलनेवाले नहीं होते।

(४) अपना मतलब किसीको जाहिर न होने देना व्यापारकी चतुराई है।

(५) व्यापारीके बोलनेकी यह चतुराई है कि, वह किसीपर यह प्रकट न होने देवे कि उसे साम्हनेवालेका विश्वास नहीं है। लोगोंको यह

मालूम न होने देना चाहिए कि अमुक व्यापारीकी जबान-ही-जबान है—हृदय ऐसा नहीं है ।

(६) तिरछोल स्वभाव, क्रोधमयी प्रकृति और क्रूर बोली व्यापारीमें न होना चाहिए ।

(७) औरोंपर भरोसा रखना स्वयं अपना नाश करना है ।

(८) निम्न लिखित बातें यद्यपि कठिन है तथापि अत्यंत आवश्यक और व्यापारमें व्यापारियोंका कल्याण करनेवाली है—वाणीसे मनुष्योंको वश किया जाय, बर्तावसे अपने आदरको बढ़ाया जाय और व्यवहारसे अपना विश्वास जमा दिया जाय ।

(९) व्यापारीको ऐसी गप-शपमें शामिल होनेकी कोई आवश्यकता नहीं है कि जिसमें उसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध न हो ।

(१२) व्यापारीको जहाँतक बन पड़े झझटोंमें पड़ना, दूसरोंके काममें व्यर्थ माथापच्ची करना, किसीके साथ बहुत घना सम्बन्ध रखना उचित नहीं है और न बिल्कुल अनजान ही रहना ठीक है । मतलब यह है कि खूब सोच समझकर व्यापारीको अपना वर्ताव स्थिर करना चाहिए ।

(११) झूठ बोलना, कपट करना, मिथ्या दम-दिलासे देना ये व्यापारके लक्षण नहीं है । ये तो व्यापारका आत्म-घात करना है । इन कामोंसे अपनी उन्नति मानना भूल है ।

(१२) दया, परोपकार और दानशीलता व्यापारीके आचरणोंमें अवश्य रहना चाहिए और उनसे दूसरोंको लाभ पहुँचाना चाहिए ।

(१३) मनोनिग्रह रखकर व्यापारीको चाहिए कि दुराचारका सेवन न करे । उसे मीठी बोली और सादे रहन-सहनसे अपना आदर दूना करना चाहिए । ऐसा वर्ताव रखना चाहिए कि जिससे किसीको यह मालूम न हो अमुक व्यापारी स्पर्धा कर रहा है । ऐसी कला व्यापारीमें होना चाहिए ।

४ व्यवहार:—

(१) जो व्यापारी क्रय-विक्रय नक्द रुपयेसे नहीं करता या वैसा करनेकी पद्धति नहीं जारी करता, वह आगे पीछे नाश हुए विना नहीं रहता ।

(२) दूसरोंपर बेहद विश्वास करनेसे पश्चात्ताप ही हाथ आवेगा और किसी लाभकी आशा नहीं है ।

(३) प्रतिस्पर्धामें महानुभावता रखना चाहिए और उसे अपने बर्तावमें दिखलाना चाहिए ।

(४) अपने बराबरके व्यापारियोंके सम्बन्धमे पछिसे बुरी सम्मति देना और अपने पड़ोसीकी या अन्यान्य व्यापारियोकी निन्दा करना नीचता और असभ्यता है ।

(५) हिसाब न रखकर लेन-देन करना दूसरोंको फायदा करनेवाला है ।

(६) जितना मिले उतना नफा लेकर नुकसान हुआ हो उसे भरलेना चाहिए, ज्यादा नफेकी आशासे नुकसानमें न उतरना चाहिए ।

(७) ज्यादा नफा और कम व्यवहारकी अपेक्षा कम नफा और ज्यादा व्यवहार अच्छा है

(८) जिस व्यवसायकी लगन हमें न लगे उससे कुछ लाभ नहीं होगा ।

(९) नुकसान होनेका खास साधन बहुत बड़ी आशा और भारी नफेकी लालसा है ।

(१०) जो व्यापारी अपने ग्राहकको प्रसन्न नहीं रख सकता उसके व्यापारमें कभी बरकत नहीं होती ।

(११) जिस व्यापारके साधन अपने हाथमें न हों उसमें बरकत पाकर सुखी होनेकी आशा करना व्यर्थ है ।

(१२) जिस व्यापारीमें दृढ निश्चय करना, शीघ्र निर्णय करना और झटपट फैसला करना-ये तीनों गुण नहीं हे उसे सफलमनोरथ होनेकी आशा न करना चाहिए।

(१३) निश्चयपूर्वक धैर्यसे किये हुए व्यापारमें सफलता होती है।

(१४) अधूरी पूँजी, अविश्वासपात्र नौकर और अनिश्चित व्यवसाय, ये अपयशके कारण हैं।

(१५) अपनी हिम्मत न हो, घरू पूँजी न हो, निजी अनुभव न हो और स्वयं देखरेख न रक्खी जा सकती हो तो ऐसे मनुष्यके लिए यही अच्छी सम्मति है कि वह स्वयं अपने जोखिम पर व्यापार न करे।

प्रामाणिकता।

उत्तम स्त्रियोंका श्रेष्ठ शृंगार जैसे पातिव्रत्य है वैसे ही व्यापारीका श्रेष्ठ शृंगार प्रामाणिकता है। प्रामाणिकता व्यापारी-जीवनकी सफलता है। प्रामाणिकता किसे कहते है, इसके समझानेकी आवश्यकता नहीं है। व्यापारमें लेन-देन, वचन, पत्रव्यवहार और भाव-ताव मुख्य बातें है। इनमें सदा सचाई रहनी चाहिए। झूठी बातमें कभी बरकत नहीं होती। प्रामाणिकताके बराबर उत्तम और सुखदायक कुछ नहीं है। प्रामाणिकतामें हानि नहीं है। इसीमें कीर्ति और इज्जत-आबरू है। प्रामाणिकपन व्यापारीका सौभाग्यतिलक है। कीर्ति, लाभ और कौशलकी व्यापारीको आवश्यकता है। ये तीनों बातें प्रामाणिकतासे प्राप्त होती है।

व्यापारीके वही-खाते खरे होने चाहिए। उसमें जरा भी फरक होना ठीक नहीं है। लेन देन होते ही तुरत लिखा जाना चाहिए। वही-खाते इतने साफ होने चाहिए कि जब चाहे तब बतलाये जा सकें। साफ वही खातवालोंको सरकारकी ओरसे भी उसकी प्रामाणिकताके कारण सहायता मिलती है। यदि उसे नुकसान हो तो सरकार उसे फिर उद्योग

करनेकी सलाह देती है और लेनदारोंको ओरसे त्रास न होने देनेका सार्टिफिकेट देती है, इसके विपरीत हिसाब ठीक नही होता तो सजा देती है ।

अतएव सबसे पहले, व्यापारीको हिसाब साफ रखना चाहिए । वह ऐसा होना चाहिए कि जिसे देखकर सब ठीक तौरपर समझ लें, उसमें किसीको सन्देह न रहे । खोटा हिसाब रखना महापातक है ।

व्यापारी अपने मालकी खूब कीमत पैदा करना चाहे यह स्वाभाविक है । परन्तु खराब मालको ठीक बतलाना सर्वथा अप्रामाणिकता है । अपना माल ग्राहकको बतला देने बाद उसकी परखमें ग्राहक भूल करे तो इसमें व्यापारीका दोष नही है । प्राय माल और कीमतमे ही अप्रामाणिकता होती है । व्यापारीको चाहिए कि माल बतला कर कहे कि अच्छी तरह देख लीजिए यह माल है और देखे बाद वैसा ही माल ठहराई हुई कीमतपर पूरा पूरा दे देवे । इसीमें प्रामाणिकता है । भावमे जो ठहरे सो ठीक । परन्तु नाप–तोल और मालमे फेरफार न होना चाहिए । इस तरह लाभ उठानेकी इच्छा करनेमें भी महापाप है–राजका गुनाह है । व्यापारमें सचाई ही लाभदायक है । प्रामाणिक व्यापारी कभी सच्चाईको नही छोडता–ऐसी चालाकियाँ नही करता ।

सक्षेपमें यही कहना है कि जिसमे प्रामाणिकता नही है वह व्यापारी ही नहीं है । प्रामाणिक व्यापारीको सब चाहते है, उसकी कीर्ति फैल जाती है, बाजारमे उसकी आबरू होती है । अप्रामाणिककी नही । कम–ज्यादा नफा होनेका आधार बाजारके रुख और समयपर निर्भर है । प्रामाणिक होना सबके हाथकी बात है । उसमे पूँजीकी जरूरत नही है । प्रामाणिकता हरकोई रख सकता है । व्यापारियोंको प्रारम्भसे ही इसका अभ्यास रखना चाहिए ।

———— ————

व्यापार-नीति।

व्यापार कपटका रोजगार है, व्यापार झूठ बोलनेका व्यवहार है, व्यापारमें झूठ साँच किये बिना गति ही नहीं है, इत्यादि बहुतसे लोगोंके मुँहसे सुन पडता है। व्यापार-नीतिके सम्बन्धमें ऐसा भ्रष्ट लोक-मत होजाना बड़ी ही बुरी बात है-दुर्भाग्य है। अफसोस है कि बहुतसे व्यापारी ऐसा ही आचरण करते है। व्यापार-नीतिका स्वरूप विशेष शुद्ध और उदात्त होना चाहिए। व्यापार-में अनीतिको धिक्कार दिया जाना चाहिए। व्यापार, बड़ा ही श्रेष्ठ, अत्यन्त महत्त्वका और अत्यन्त गहरा विषय है। इसमें नीतिकी ऐसी खराबी होना ठीक नही। जिसमें नीतिका अपमान और अनीतिका महत्त्व हो उस धंदेकी फूटी बदामके भी बराबर कीमत नहीं है। ऐसे धंदेसे दूर रहनेमें ही चतुराई है। जिस धंदे पर देशके वैभवका और मनुष्यजातिकी सुख-समृद्धिका आधार है उसके लिए यह कहना कि यह नीतिमय नही हो सकता, अनीतिसे ही चलता है—ठीक नही है।

व्यापार और नीति अलग-अलग है, ऐसी कल्पना ही ठीक नही है। सच बोलना, प्रामाणिक और विश्वासपात्र रहना, नीतिसे बाहर होना नहीं कहा जा सकता। अपनी पूँजीसे लोगोंका भरण-पोषण करने-की व्यवस्था करना क्या अनीति है? लोगोंकी आवश्यकताको जितना होसके कम भावपर पूरी करना क्या अन्याय है? अपने प्राणोंसे भी प्यारे पैसेको जोखिममे डालनेकी प्रवृत्तिका हेतु दुष्ट नही होसकता। अतएव व्यापारको अनीतिमय कहना अन्याय है। जगतमे होती हुई उथल-पाथलको ध्यानमें रखकर सस्ते मालको खरीदना और अपनी मिहनत और पूँजीका बदला लेकर बेचनेका व्यवसाय करना लुचपन नही है। सच्चा व्यापारी खोटी बात नहीं करता। जिस बातके कहनेमें

उसे नुकसान हो ऐसी बात यदि वह नहीं कहता तो कुछ बुराई नहीं है। अपनी मिहनत, अपना खर्च, जोखिममें उतरनेका बदला, व्यापारीका नफा, मजदूरोंकी मजदूरी ये सब मिलकर वस्तुकी कीमत होती है। अमुक काम मुफ्तमें होजाय या थोड़ेमें होजाय ऐसी इच्छा अप्रामाणिक मनुष्योंकी होती है। इसीतरह वाजिब ज्यादा नफेकी इच्छा करना भी अप्रामाणिकता है। व्यापारमें स्पर्धा होती है। स्पर्धासे नफेमें कमी पड़ती है। माल उधार देनेसे उसपर नफा बढ़ाना पड़ता है। उधारकी परिपाटीसे व्यापारी अप्रामाणिक होजाता है। यह अप्रामाणिकताके साधनोंमे एक साधन है। व्यापारमे नफा मजदूरी है। मजदूरी कम या ज्यादा लेना प्रामाणिकता या अप्रामाणिकताका कारण होसकता है, परन्तु मजदूरी मॉगनेमें अनीति नही होसकती। अपने खोटे मालको सौगन्द खा खा कर अच्छा बतलाना, माल दिखलाना एक, भाव करना दूसरेका और देना तीसरा ही–यह व्यापार नहीं है–धोकेबाजी है–लुच्चाई है। अगर कोई व्यापारी इसतरहका काम करता है तो यह दोष उसका ही है–धंदेका नही। मालको परख कर लेना यह धंदेमें पहली खबरदारी है। इसमें भूल करना अपनी गलती है। इसका ऐब दूसरों पर लगाना ठीक नहीं–असभ्यता है। ऐसा हो, तो भी व्यापारमें नीतिकी आवश्यकता है, अनीति इष्ट है ही नहीं। यहाँ पर यह कहना भी ठीक है कि जो व्यापारी नीतिकी मर्यादाका उल्लंघन न करे वही सच्चा व्यापारी है। व्यापारकी क्या नीति है इसके विषयमें यहाँ पर सूत्ररूपसे कुछ लिखते है.—

(१) व्यापारीको सत्य ही कहना चाहिए, जहाँपर सत्य कहना इष्ट न हो वहाँ पर चुप रहना चाहिए परन्तु झूठ न बोलना चाहिए।

(२) अपना हेतु दूसरोंको न मालूम होने देना पाप नहीं है, अपना अनुभव न कहनेमें अन्याय नही है, परन्तु कहनेके बहाने झूठ कहना पाप है।

(३) अपने वचन पालना चाहिए, न पालना पाप है।

(४) करार पालना चाहिए। पालना अशक्य हो तो पहलेसे सुचना दे माफी माँगना चाहिए। अपने ही कुसूरसे बाधायें न आई हो तो वे भी प्रकट करना चाहिए।

(५) लोगोंका विश्वास अपने परसे उठजाय ऐसा कोई काम न करना चाहिए। विश्वासघात करना महापाप है। अपनी ऐसी इच्छा न हो, वास्तविक भूल न हो, और विश्वासघातका आरोप आवे तो सप्रमाण अपना निरपराधीपन साबित करना चाहिए।

(६) जामिनी, जवाबदारी और बीचबचावमे पड़ना ठीक नहीं। इन जोखिमोंमें उतरनेकी सामर्थ्य हो तभी उतरना चाहिए-अन्यथा नीतिमें धक्का आनेकी बहुत सम्भावना है।

(७) तुच्छ डाह, बराबरीके धदेवालोंसे मात्सर्य और प्रतिस्पर्धीकी पीछे निन्दा ये असभ्यता है, नीति नहीं। जो कुछ कहना हो चार आदमियोंके साम्हने रूबरू कहना चाहिए।

(८) विश्वासघात, बातको लौटजाना, ठगपन और दगा इनका विचार भी व्यापारीके जीमे नही उठाना चाहिए।

(९) सरकारी कानूनके पेचमें न आकर चाहे जैसे पैसे कमानेका नाम व्यापार है, ऐसी समझ अनीतिपूर्ण है।

(१०) लोगोंकी मूर्खता, भोलापन और विश्वासका बेतरह लाभ उठाना व्यापारकला नही है, लुटेरापन है-लुच्चाई है।

(११) प्रामाणिकताके साथ काम करना व्यापारीका काम है। व्यापारीका मुख्य कर्तव्य है कि अप्रामाणिकतासे जो मिले उसका त्याग करे। यही सच्ची व्यापारनीति है।

(१२) व्यापारीका यह काम है कि वह अपने मालको इस तरहका

मनोहर बतला सके कि ग्राहक ललचाया करे, परन्तु झूठ बोलकर ऐसा न करे।

(१२) व्यापारीकी यह एक उत्तम कला है कि लोगोंका विश्वास उसपर जम जाय और वे उसकी बातको सच्ची समझे। परन्तु यह याद रखना चाहिए कि इस व्यवहारसे लोगोंको ठगना न चाहिए उनके साथ सच्चा व्यवहार रखना चाहिए।

इनके सिवाय और भी बहुतसे नियम बतलाये जा सकते है, परन्तु मुख्य बात इतनी ही है कि व्यापारमें नीतिमत्ताकी आवश्यकता है। व्यापार और नीति एक ही जगह रहना चाहिए। नीतिकी मर्यादाका व्यापारीको उल्लंघन न करना चाहिए। व्यापारमे नीति और अनीति बहुत ही पास होती है। जरा भी चूके कि नीतिसे अनीतिमे पैर जा पड़ता है। बहुत ही नाजुक धंदेमें बड़ी सावधानी रखनी पड़ती है। जो ऐसी सावधानी रखता है उसकी इज्जत आबरू बढ़ती है। विश्वास और द्रव्य दोनो पाना बड़ा कठिन है। व्यापार बड़ी ही सावधानीका धंदा है। आबरू काचके मुआफिक है। वह बिगड़े बाद फिर नही ठीक हो सकती।

व्यापार एक प्रकारका रणसंग्राम है। व्यापारमे नुकसान होनेसे तुच्छ मनुष्य निन्दा करते है, अच्छे नहीं। व्यापारमे नुकसान होना तिरस्कार करने योग्य अपराध नही है—अक्षम्य पातक नहीं है। मैने अमुक अमुक व्यापार किया और उसमे इस तरह नुकसान हुआ इस तरह साफ कहनेवालेको हर कोई मदद दे सकता है। ऐसे व्यापारियोको निरपराध ठहरानेके लिए सरकारने एक स्वतन्त्र विभाग बना रक्खा है।

धर्मपर श्रद्धा।

व्यापार अनन्ताचिन्ताका स्थान है। व्यापारमें बड़ी ही पराधीनता होती है। थोड़े नफेके लिए हजारोंके जोखिममें उतरना पड़ता है। दूसरोंकी साख पर रुपया देना पड़ता है। नैसर्गिक उथल-पुथलके आधारपर सर्वांशमें रखनेवाला धंदा व्यापार है। इसमें दिनरात चिन्ता रहती है। यह चिन्ता भयंकर न हो पड़े, असह्य न हो जावे इसके लिए आवश्यक है कि धर्मपर पूर्ण श्रद्धा रक्खी जावे। धर्मकी श्रद्धा ऐसी वस्तु है जिससे कि चिन्ता, उद्वेग, भय आदि सबका नाश हो जाता है। जिसकी धर्मपर श्रद्धा नही उसे व्यापार जैसी चिन्ताभरी बातमे पडना न-चाहिए। जिसकी धर्मपर श्रद्धा नही है उसे व्यापारमें समृद्धि नहीं मिल सकती, उसे व्यापारमें सुख भी नही होता। व्यापारमें बड़ी हिम्मत चाहि -मनुष्योंपर विश्वास चाहिए। जिसका विश्वास धर्मपर नही, वह कैसे विश्वासी हो सकता है? व्यापार अनेक व्यक्तियोंकी प्रामाणिकताका परिणाम है। धर्मसे प्रामाणिकता आती है। व्यापारियोको धर्मस्नेही होना चाहिए, प्रतिदिन परमेश्वरकी स्तुति करना चाहिए, अपने चित्तको चरित्रको उच्च बनाना चाहिए। दुनियाको दिखानेके लिए नही, किन्तु अपनी उच्चताके लिए-आन्तारिक शुद्धिके लिए धर्मका पालन करना चाहिए। इस धर्मश्रद्धासे व्यापारी निराकुलतापूर्वक अपने धंदेको अच्छी तरह कर सकेगा और आत्मकल्याणके साथ लोककल्याण भी कर सकेगा।

समाप्त।